07 क्या वसुंधरा को मनाने में जुटा भाजपा नेतृत्व ?
18 गाँवों में पहुँच रहा किसान आन्दोलन

15 मार्च, 2021

₹40

तहलका

HINDI.COM

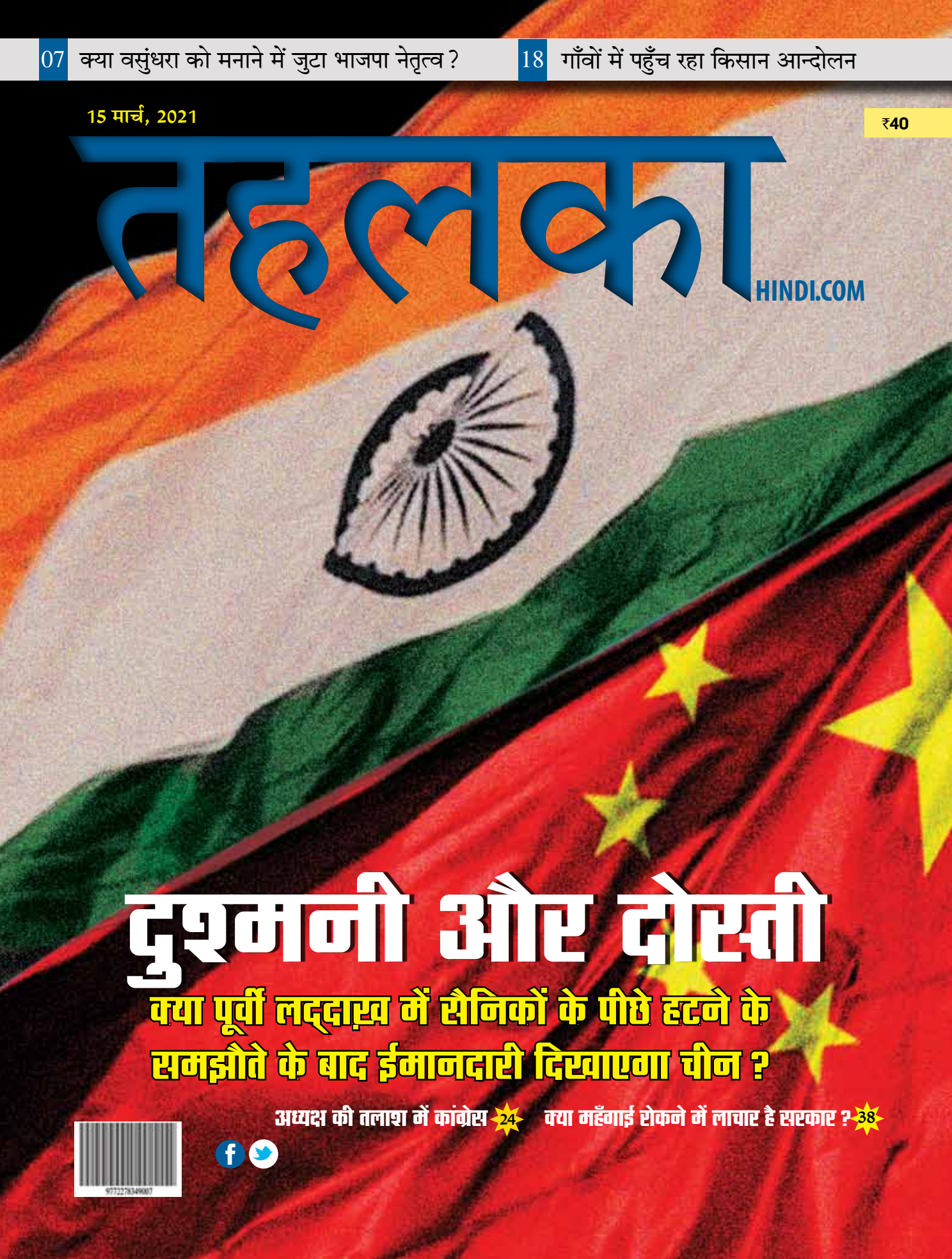

दुश्मनी और दोस्ती

क्या पूर्वी लद्दाख़ में सैनिकों के पीछे हटने के समझौते के बाद ईमानदारी दिखाएगा चीन ?

अध्यक्ष की तलाश में कांग्रेस 24
क्या महँगाई रोकने में लाचार है सरकार ? 38

VISIT…

EXCELLENCE, LIKE COURAGE, CAN BECOME A HABIT

Tehelka

WINS IPI INDIA AWARD

FOR TWO CONSECUTIVE YEARS IN A ROW

AWARDED FOR EXCELLENCE IN JOURNALISM 2011 & 2012 BY THE INDIA CHAPTER OF
THE INTERNATIONAL PRESS INSTITUTE

TEHELKA'S PATHBREAKING WORK HAS WON IT MORE THAN 40 AWARDS

चीन पर चौकसी ज़रूरी

अमेरिका के रिपब्लिकन सदस्य, माइकल मैककॉल ने जब यह ट्वीट किया कि 'भारत को अपनी सम्प्रभुता की रक्षा करने के लिए मज़बूती से खड़े देखकर अच्छा लगा', तो यह स्पष्ट हो गया कि बीजिंग ने किस कारण से सीमा पर पीछे हटने का फ़ैसला किया है। मैककॉल ने ही एक और ट्वीट में कहा- 'चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की पूर्व और दक्षिण चीन सागर से लेकर मेकांग और हिमालय तक निरंतर क्षेत्रीय आक्रामकता के लिए 21वीं सदी में कोई जगह नहीं है।' उन्होंने इस टिप्पणी से संकेत दिया कि अंतर्राष्ट्रीय समुदाय चीन की सेना के आर्थिक विस्तारवाद से व्याकुल है।

'तहलका' के मौजूदा अंक की आवरण कथा इसी मुद्दे पर है कि कैसे और क्यों बीजिंग ने दुनिया के सामने यह घोषणा करने में असामान्य तत्परता दिखायी है कि भारत के साथ सीमा पर सेना की वापसी शुरू हो गयी है और नौ महीने तक सीमा पर चला गतिरोध ख़त्म हो गया है। क्वाड (भारत, जापान, ऑस्ट्रेलिया और अमेरिका का साझा रणनीतिक मंच), जो क्षेत्रीय अखण्डता और सम्प्रभुता के लिए सम्मान के आधार पर नियम-आधारित अंतर्राष्ट्रीय आदेश को बनाये रखने के लिए प्रतिबद्ध है; ने चीन को आईना दिखाया। इसके बाद ही चीन की तरफ़ से पीछे हटने की घोषणा हुई। क्वाड के रिकॉर्ड में है कि चीन ने उसके सभी चार सदस्यों के किसी भी औपचारिक सम्मेलन से पहले राजनयिक विरोध जताया था। इसके एक दिन बाद ही रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने संसद में पुष्टि की थी कि भारत-चीन सीमा पर सेना की वापसी की शुरुआत हो गयी है। उन्होंने तत्काल यह भी जोड़ा कि भारत ने कोई क्षेत्र नहीं छोड़ा है। यह समझौता पूर्वी लद्दाख़ में पैंगोंग झील के उत्तरी और दक्षिणी तट पर चरणबद्ध, समन्वित और सत्यापित आधार पर सेना की वापसी को लेकर है।

भारत और चीन ने बड़ी संख्या में युद्धक टैंक और पूर्वी लद्दाख़ क्षेत्र के ऊँचाई वाले इलाक़ों में भारी सैन्य उपकरणों को जुटाया था। इसके बाद पिछले साल जून में गलवान घाटी में ख़ूनी संघर्ष के बाद तनाव बढ़ गया था। आमने-सामने के इस संघर्ष में 15 जून, 2020 को एक कमांडिंग अफ़सर सहित 20 भारतीय सैनिक शहीद हो गये थे। दोनों पक्षों के बीच कई दशक के बाद यह सबसे गम्भीर सैन्य संघर्ष था। लगभग 8-9 महीने के बाद चीन ने आख़िर अब यह स्वीकार किया है कि उसके भी चार सैनिक गलवान घाटी के संघर्ष में मारे गये थे। हालाँकि एक अमेरिकी ख़ुफिया रिपोर्ट में चीनी पक्ष के हताहतों की संख्या 35 या उससे अधिक होने का दावा किया गया है। तनाव कम होने के संकेत के बाद अब चीन अपनी साख बचाने के लिए अपनी जीत का दावा कर रहा है और उसने पिछले साल जून के ख़ूनी संघर्ष में अपने पाँच सैनिकों, जिनमें चार संघर्ष में मारे गये थे; के लिए वीरता पुरस्कारों की घोषणा भी की है।

भले ही चीन ने अपने पाँव पीछे खींच लिए हैं, लेकिन भारत को बहुत सतर्क रहने की आवश्यकता है। क्योंकि चीन के सैन्य और आर्थिक विस्तार को देखते हुए भारत उस पर भरोसा नहीं कर सकता। चीन का अपने पाँव पीछे खींचना भ्रामक होने के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय समुदाय की आलोचना से बचने की एक चाल भर हो सकती है। अक्सर कही जाने वाली शेक्सपियरन कहावत का एक उद्धरण चीन पर सटीक बैठता है कि 'कोई मुस्कुरा सकता है, और मुस्कुरा सकता है; और वह एक खलनायक भी हो सकता है।'

चरणजीत आहुजा
tehelkaletters@gmail.com

संपादक : **चरणजीत आहुजा***
समाचार संपादक : **पंडित प्रेम बरेलवी**

विशेष संवाददाता
रियाज़ वानी (श्रीनगर)
मुदित माथुर (लखनऊ)
राकेश रॉकी (दिल्ली)
राजीव दुबे (दिल्ली)

डिजाइन
अनंगपाल सिंह
फोटो संयोजन : **दीपक झा**

वेब
सनी शर्मा

ऐडसेल्स
वीपी ऐडसेल्स : **ज़ाकिया ख़ान**
डिप्टी मैनेजर : **रजनी भल्ला**
tehelkaletters@gmail.com
प्रोडक्शन मैनेजर : **पीयूष श्रीवास्तव**

सर्कुलेशन टीम : **उमा शंकर तिवारी** (9818009833), **सूरज सिंह**

मुद्रक एवं प्रकाशक : **सविंदर बाजवा**

स्वामित्व : **तहलका कॉम प्राइवेट लिमिटेड**
प्रकाशक : **सविंदर बाजवा** द्वारा **तहलका कॉम प्राइवेट लिमिटेड** के लिए एमपी प्रिंटर्स, बी-220, फेज-2, नोएडा (उत्तर प्रदेश) से मुद्रित और बिल्डिंग संख्या 23, नेहरू प्लेस, नयी दिल्ली-110019 से प्रकाशित

प्रधान कार्यालय
बिल्डिंग संख्या-23
नेहरू प्लेस, नयी दिल्ली-110019
दूरभाष : 011-40600890
ईमेल : tehelkaletters@gmail.com

सब्सक्रिप्शन की जानकारी और सर्कुलेशन की शिकायत के लिए ईमेल :
tehelkaletters@gmail.com

वर्ष 13, अंक 5; 1-15 मार्च, 2021
कुल पृष्ठ 52 (आवरण सहित)

*समाचार चयन के लिए पीआरबी एक्ट 1867 के तहत ज़िम्मेदार

इस अंक में

महापंचायतों की अन्धी सुरंग

महापंचायतों का दौर किसान आन्दोलन किस दिशा में ले जा रहा है। क्या इससे कोई समाधान निकलने वाला है? किसानों के बाद अब राजनीतिक दलों ने भी महापंचायतों का सिलसिला शुरू करने का फ़ैसला कर लिया है। कांग्रेस ने तो बाक़ायदा कार्यक्रम तय कर लिया है। हरियाणा में कई महापंचायतें राजनीति से अलग नहीं रहीं। उनमें बाक़ायदा तौर पर राज्य में भाजपा-जजपा सरकार को हर क़ीमत पर अस्थिर करने की घोषणा की गयी, जिसका लोगों ने हाथ उठाकर स्वागत किया।

20

रक्तदान के महाशिविर की तैयारी

22

...निफा शहीद भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव के 90वें शहीदी दिवस पर 23 मार्च को संवेदना कार्यक्रम के तहत देश भर में 90 हज़ार यूनिट रक्त जुटाएगी।

सरकारी बैंकों और एटीएम का बुरा हाल

34

देश में बैंकों और एटीएम की कोई कमी नहीं है। अस्पतालों, कॉर्पोरेट सेक्टर, शिक्षण सस्थानों और बाज़ारों के साथ-साथ कॉलोनियों में एटीएम जहाँ-तहाँ देखे जा सकते हैं।

और बढ़ा गहलोत का रुतबा

42

सचिन पायलट ने अगर रूठने और मुँह फुलाने की राजनीति का धारदार हथियार नहीं थामा होता, तो राहुल गाँधी की हालिया राजस्थान यात्रा के दौरान प्रोटोकॉल में उन्हें ख़ारिज नहीं किया जाता।

समाधान नहीं है बैंकों का निजीकरण

45

भारत के बैंकिंग इतिहास में यह पहली बार होगा, जब सरकार 4 सरकारी बैंकों को बेचेगी या उनका निजीकरण करेगी।

समस्याएँ पैदा करते लोग !

48 शहरों में हर जगह कई तरह की समस्याएँ अनायास ही देखने को मिल जाती हैं। इन समस्याओं को शहर के ही कुछ लोग पैदा करते हैं और जो लोग इन समस्याओं से हर रोज़ दो-चार होते हैं, वो इन्हें नियति समझकर ख़ामोश रहते हैं। प्रशासनिक अधिकारी व ज़िम्मेदार विभाग के लोग न तो किसी से कुछ कहते हैं और न ही शहरों की दशा बिगाड़ने वाले लोगों के ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई करते हैं।

क्या कठपुतली हैं हम?

50 इन दिनों मज़हबी मतभेद और तकरार होना एक आम चलन की तरह हैं। सियासत इसका बेजा फ़ायदा उठा ले जाती है। कई शहर इसके गवाह हैं, जहाँ मज़हबी मतभेद पहले तनाव में बदला और फिर भयानक हिंसा में। लोग लड़े, कटे-मरे, और फ़ायदा हुआ सियासी लोगों को। इतिहास इस बात का गवाह है कि मज़हबों को लेकर हुए इंसानी झगड़ों ने शहर के शहर, गाँव के गाँव बर्बाद कर दिये हैं।

लेकिन हम इंसानों ने कभी नहीं सोचा कि मतभेदों के चलते हम एक झटके में बर्बाद हो जाने के लिए क्यों उतावले रहते हैं?

आपके पत्र

tehelkaletters@gmail.com

दिन-ब-दिन बढ़तीं समस्याएँ

देश में दिन-ब-दिन समस्याएँ बढ़ती जा रही हैं। साल 2020 जितना बुरा बीता, 2021 की शुरुआत उससे कम बुरी नहीं है। उत्तराखण्ड में आयी भयंकर प्राकृतिक आपदा इसका एक बड़ा उदाहरण है। कुछ पूँजीपतियों और बड़े लोगों को छोड़ दें, तो आज शायद ही कोई ऐसा आदमी हो, जो समस्याओं से न घिरा हो। वैसे भी आम लोगों की समस्याएँ सबसे ज़्यादा होती हैं। आम लोगों के पास सबसे बड़ी समस्या होती है गुज़र-बसर की। 2020 के मार्च के बाद से जिस तरह से लोगों के रोज़गार गये हैं और उनके सामने जीवन जीने का संकट पैदा हुआ है, वह लाखों लोगों का जीवन तबाह कर रहा है। यह दुर्भाग्य की ही बात है कि हमारे देश में ग़रीबों की संख्या बहुत ज़्यादा है। हालात यह हैं कि यहाँ लाखों लोग या तो कम भोजन पर ज़िन्दा हैं या फिर उनमें से काफ़ी लोग एक समय खाकर जीते हैं और बहुत-से लोग तो आज भी भूखे पेट सोने को मजबूर होते हैं। इस दशा को सुधारने की बहुत ज़रूरत है। शर्म की बात यह है कि हम आधुनिक युग में जी रहे हैं, जहाँ जितनी चाहें सुख-सुविधाएँ जुटायी जा सकती हैं। लेकिन हालात नहीं बदल रहे। क्योंकि कुछ लोगों के पास इतना धन है कि उन्हें ख़ुद नहीं पता और अनेक लोगों के पास न कपड़े हैं, न घर है और न कमायी के संसाधन। कहने को हम सभी बड़े गर्व से कहते हैं कि हम भारतीय हैं, लेकिन दूसरों के सहयोग, ख़ासकर ग़रीबों, लाचारों के सहयोग के लिए बहुत कम लोग क़दम बढ़ाते हैं। मेरा मानना है कि हम सबको मिलकर कुछ ऐसे काम करने चाहिए, जिससे अधिक-से-अधिक लोगों को रोज़गार मिल सके। अगर हम इस लायक नहीं कि किसी को कोई रोज़गार दे सकें, तो हमें ख़ुद को इस योग्य बनाने का प्रयास करना चाहिए या कम-से-कम दूसरों को प्रोत्साहित करना चाहिए। ऐसा करने से भी कुछ लोगों को आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलेगी। कहने का भाव यह है कि किसी भी तरह हमें अपनी सरकारों और देशवासियों को विकास के लिए सोचना और कुछ करना चाहिए।

बीना चौधरी, शकरपुर, दिल्ली

महँगाई को गम्भीरता से ले सरकार

पेट्रोल शतक छू गया, डीजल शतक छूने वाला है और रसोई गैस सिलेंडर 850 के क़रीब पहुँच गया है। पूरे देश में हाहाकार मचा हुआ है और सरकार अभी भी ख़ामोश है। ऐसा लगने लगा है मानो सरकार को लोगों की समस्याओं से कोई लेना-देना नहीं है। शायद इसीलिए वह महँगाई को गम्भीरता से नहीं ले रही है। अर्थशास्त्री कह रहे हैं कि महँगाई और बढ़ेगी। इसकी वजह डीजल व पेट्रोल के दामों में भारी बढ़ोतरी है। हर दिन डीजल व पेट्रोल के दाम जैसे-जैसे बढ़ेंगे, महँगाई अपने आप बढ़ती जाएगी। जबसे कोरोना वायरस ने पाँव पसारे हैं, बेरोज़गारी और ग़रीबी भी बढ़ रही है। सरकार को सोचना चाहिए कि ग़रीबी बढ़ने से लोगों में आत्महत्या की प्रवृत्ति बढ़ेगी। लोग पहले से ही विकट परेशानी में हैं, जो उनके तनाव का कारण बन रहा है। अगर अब भी महँगाई पर क़ाबू नहीं पाया गया, तो हालात और बेक़ाबू हो जाएँगे। लोगों को कम तनख़्वाह पर काम करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा और अपराध बढ़ने लगेंगे। केंद्र सरकार सरकारी सम्पत्तियाँ बेचने की बात कह चुकी है। सरकारी महकमों में पहले से ही ठेकेदारी प्रथा का चलन है, जो दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा है। हालत यह है कि एक-एक सरकारी पद पर उस पद के लिए ज़रूरी योग्यता से ज़्यादा पढ़े-लिखे हज़ारों अभ्यर्थी आवेदन करते हैं।

प्रवीन, नोएडा, उत्तर प्रदेश

विनाश के लिए कौन ज़िम्मेदार?

उत्तराखण्ड में ग्लेशियर टूटने से जो विनाश हुआ, उसका ज़िम्मेदार और कोई नहीं, इंसान ख़ुद है। अब चाहे इसका ठीकरा सरकार के सिर पर फोड़ दें, चाहे बाँध और बिजली निर्माण संयंत्रों पर फोड़ दें और चाहें प्रकृति पर। हमें इस बात को अच्छी तरह समझना होगा कि हमें प्रकृति को नाराज़ करके बर्बादी के सिवाय और कुछ नहीं मिलेगा। अन्धाधुंध खनन करते जा रहे हैं और हर रोज़ लाखों पेड़ काटे जा रहे हैं, जिससे हमारी ज़िन्दगी कम होती जा रही है। **ममता देसाई, मुम्बई, महाराष्ट्र**

फॉर्म-IV (नियम 8 देखें)

तहलका

1.	प्रकाशन स्थल	: बिल्डिंग संख्या-23, नेहरू प्लेस, नई दिल्ली-110019
2.	प्रकाशन अवधि	: पाक्षिक
3.	मुद्रक का नाम	: सविंदर बाजवा
	क्या भारत के नागरिक हैं?	: हाँ
	(यदि विदेशी हैं, तो उस देश का नाम)	: लागू नहीं
	पता	: 3579/1, सेक्टर-37डी, चंडीगढ़-160036
4.	प्रकाशक का नाम	: सविंदर बाजवा
	क्या भारत के नागरिक हैं?	: हाँ
	(यदि विदेशी हैं, तो उस देश का नाम)	: लागू नहीं
	पता	: 3579/1, सेक्टर-37डी, चंडीगढ़-160036
5.	संपादक का नाम	: चरणजीत आहुजा
	क्या भारत के नागरिक हैं?	: हाँ
	(यदि विदेशी हैं, तो उस देश का नाम)	: लागू नहीं
	पता	: 6198, एमएचसी, मनीमाजरा, चंडीगढ़-160101
6.	पत्रिका के मालिकों और शेयरधारकों	: तरुण जीत तेजपाल
	के नाम, जिनकी कुल पूँजी में एक फ़ीसदी	: बिल्डिंग संख्या-23, नेहरू प्लेस, नई दिल्ली-110019
	से ज़्यादा की हिस्सेदारी है।	: अनिल कुमार गुप्ता
		: बिल्डिंग संख्या-23, नेहरू प्लेस, नई दिल्ली-110019

मैं सविंदर बाजवा, घोषणा करता हूँ कि उपरोक्त विवरण मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार पूर्णत: सत्य है।

sd/-

दिनाँक : 01 मार्च, 2021 **सविंदर बाजवा**

वेबसाइट पर सर्वाधिक पढ़ी जाने वाली ख़बरें

उत्तराखण्ड में कहर : ग्लेशियर टूटने से हुआ विध्वंस बताता है कि क़ुदरत हमसे कितनी ख़फ़ा है

विज्ञान पत्रिका 'साइंस एडवांसेज' की हाल की एक रिपोर्ट बताती है कि हिमालय के लगभग 650 ग्लेशियर ग्लोबल वॉर्मिंग के कारण तेज़ी से पिघल रहे हैं; जिससे हिन्दूकुश हिमालय क्षेत्र के भारत सहित आठ देशों को गम्भीर ख़तरा पैदा हुआ है। **राकेश रॉकी**

कोटा में बुना जा रहा विकास का सुनहरा अफ़साना

पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति थियोडोर रूज़वेल्ट की यह उक्ति आज भी प्रासंगिक है कि 'सही क्या है? यह जानने से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। फ़र्क़ का इल्हाम तो तब होता है, जब सही क़दम उठाया जाता है।' राजस्थान के कोटा में विकास की दहलीज़ पर 'चंबल रिवर फ्रंट' ऐसे ही सही क़दम की मानक इबारत है। **विजय माथुर**

बजट 2021-22 : निजीकरण और विनिवेश की खुलती खिड़की

देश में निजीकरण और विनिवेश की एक बड़ी खिड़की खुल रही है। वित्तीय वर्ष 2021-22 के बजट से कुछ यही सन्देश मिलता है। वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने अपने बजट भाषण में कहा भी कि बेकार एसेट्स आत्मनिर्भर भारत के निर्माण में योगदान नहीं कर सकते। **राकेश रॉकी**

किसानों को राहत देकर ही अपनी गर्दन छुड़ा सकती है सरकार

देश में तीन नये कृषि क़ानूनों को लेकर किसान आन्दोलन को बड़े रूप में क़रीब तीन महीने होने को आये हैं। इस आन्दोलन को ख़त्म करने के सरकार के प्रयास भी अब तक विफल हुए हैं और क़ानूनों को ख़त्म करने की किसानों की माँग भी सरकार ने नहीं मानी है। **के.पी. मलिक**

इन स्थानों पर मिलेगी तहलका पत्रिका

दक्षिण भारत

- **हैदराबाद :** भाग्यनगर न्यूज़ एजेंसी (फोन- 8374941140)
- **चेन्नई :** सेंट्रल न्यूज़ एजेंसी (फोन- 044-45508213)

उत्तर भारत

- **दिल्ली :** दिल्ली मैग्ज़ीन डिस्ट्रिब्यूटर (फोन- 011-41561060, 41561061)
- **जयपुर :** नवरतन बुक सेलर (फोन- 0141-2317661, 9829373912)
- **भोपाल :** लाइफ बुक हाउस (फोन- 9826313349)
- **रायपुर :** श्री रामचंद्र बुक स्टॉल (फोन- 9827145302)
- **अमृतसर :** पंडित बेलीराम एंड सन्स (फोन- 0183-2550285)
- **जोधपुर :** लेटेस्ट मैग्ज़ीन सेंटर (फोन- 0291-2620686)
- **पठानकोट :** भाटिया बुक डिपो (फोन- 0186-2221916)
- **मेरठ :** चावला बुक डिपो (फोन- 9837015153)
- **वाराणसी :** लक्ष्मी नारायण न्यूज़ एजेंसी (फोन- 9307023122)
- **लखनऊ :** मॉडर्न बुक स्टॉल (फोन- 7235873108)
- **चंडीगढ़ :** पुरी न्यूज़ एजेंसी (फोन- 9888057364)
- **देहरादून :** गुप्ता न्यूज़ एजेंसी (फोन- 0135-2717810
- **जम्मू :** रैना न्यूज़ एजेंसी (फोन- 9419109550)
- **करनाल :** एच.आर. बुक स्टॉल (फोन- 9255426821)
- **इंदौर :** सोगानी न्यूज़ एजेंसी (फोन- 9826033552)
- **हिसार :** वर्मा न्यूज़ एजेंसी (फोन- 0166-2225293)
- **जबलपुर :** जनता न्यूज़ एजेंसी (फोन- 9691888306)

पूर्वी भारत

- **पटना :** ईस्टर्न न्यूज़ एजेंसी (फोन- 9334115121)
- **रांची :** मॉडर्न न्यूज़ एजेंसी (फोन- 9835329939)
- **गुवाहाटी :** दुर्गा न्यूज़ एजेंसी (फोन- 9435049511)
- **गोरखपुर :** स्टूडेंट कॉर्नर (फोन- 9415326404)
- **जमशेदपुर :** प्रसाद मैग्ज़ीन सेंटर (फोन- 0657-2420086)
- **बोकारो :** त्रिलोकी सिंह (फोन- 9334911785)

पश्चिम भारत

- **मुम्बई :** सेंट्रल न्यूज़ एजेंसी (फोन- 022- 66393468, 22691504)
- **नागपुर :** नेशनल बुक सेंटर (फोन- 8007290786)
- **नागपुर :** पाठक ब्रदर्स (फोन- 9823125806)
- **पुणे :** वीर न्यूज़ एजेंसी (फोन- 8149916544)
- **अहमदाबाद :** विधि न्यूज़ एजेंसी (फोन- 9727525414)
- **अहमदाबाद :** नवकर डिस्ट्रिब्यूटर (फोन- 07925503836)

क्या वसुंधरा को मनाने में जुटा भाजपा नेतृत्व ?

'तहलका' में वसुंधरा राजे के अलग संगठन बनाने की ख़बर प्रकाशित होते ही भाजपा अध्यक्ष ने उन्हें बुलाया दिल्ली

विजय माथुर

राजस्थान में भाजपा नेताओं के बीच कलह की हल्की-फुल्की सुगबुगाहट से भी केंद्रीय नेतृत्व बेख़बर रहा हो, ऐसा तो नहीं कहा जा सकता। हो सकता है कि छोटे-मोटे तनावों और राज्य के नेतृत्व में अंदरूनी नोकझोंक से केंद्रीय नेतृत्व ने बहुत सरोकार न रखा हो और सुलह न कराकर स्थानीय नेताओं की गतिविधियों को देखता रहा हो। लेकिन इस बार कलह के शोले इस क़दर भड़के कि केंद्रीय नेतृव को राजस्थान के दोनों बड़े नेताओं- वसुंधरा राजे और सतीश पूनिया को दिल्ली बुलाना पड़ा। दरअसल राजे समर्थकों ने प्रदेश अध्यक्ष को सबक़ सिखाने का अभियान छेड़ दिया है। उनके भीतर ग़ुस्से की आग छिपाये नहीं छिप रही। नौबत यहाँ तक आ पहुँची कि राजे समर्थकों ने टीम वसुंधरा का गठन कर आलाकमान को दो-टूक फ़ैसला तक सुना डाला कि प्रदेश में राजे नहीं, तो कोई और स्वीकार नहीं।

यह ख़बर राज्य में थोड़ी-बहुत फैली ज़रूर, लेकिन पार्टी नेतृत्व को ख़बर 'तहलका' में प्रकाशित रिपोर्ट 'राजे का चक्रव्यूह' से ही लगी। पार्टी नेतृत्व ने अपनी नाख़ुशी ज़ाहिर करने में समय ज़ाया नहीं किया। दरअसल प्रदेश अध्यक्ष सतीश पूनिया को फ्री हैंड दे चुके आलाकमान को खींचतान बढ़ने की आशंका तो थी, लेकिन हालात इस क़दर बिगड़ जाएँगे; इस बात का अंदाज़ा नहीं था।

नतीजतन हालात पर क़ाबू पाने के लिए पार्टी अध्यक्ष जे.पी. नड्डा ने 21 फरवरी को दोनों नेताओं- वसुंधरा राजे और सतीश पूनिया को दिल्ली बुलाया। माना जा रहा है कि भले ही पूनिया कड़ुवाहट मुकर गये, लेकिन इस बैठक में दोनों नेताओं के बीच घुल रही कड़ुवाहट का पता केंद्रीय नेतृत्व को चला।

सवाल यह है कि क्या इस पहल से दोनों नेताओं के बीच मेल-मिलाप बढ़ेगा? क्या राजे को भाजपा के दिग्गज विश्वास में ले सकेंगे कि उन्हें घबराने की ज़रूरत नहीं? इसमें कई बाधाएँ हैं। सबसे बड़ी बात, पूनिया की बेरुख़ी

ने दुविधा की शुरुआत की थी; जो कि प्रदेश कार्यकारिणी के गठन में ही ज़ाहिर हो गयी थी। प्रदेश कार्यकारिणी के गठन में राजे समर्थकों को पूछा तक नहीं गया था। राजे समर्थकों में प्रदेश अध्यक्ष के प्रति बढ़ती नाराज़गी चिन्तन शिविर में पूनिया के प्रति बढ़ते हमलों से ही ज़ाहिर है। यहाँ तक कि भाजपा के सांसद किरोड़ीलाल मीणा भी राजे समर्थकों के सुर-में-सुर मिला रहे हैं। 21 फरवरी को होने वाली बैठक में दोनों नेताओं के बीच क्या समझौता हुआ? यह तो ख़ैर अभी विश्वास से नहीं कहा जा सकता; लेकिन इतना ज़रूर साफ़ हो गया कि वसुंधरा की नाराज़गी से होने वाले नुक़सान को केंद्रीय नेतृत्व भाँप चुका है और वह पूनिया को तल्ख़ी से बचने की हिदायत ज़रूर दे चुका होगा।

सवाल यह है कि व्यावहारिक और राजनीतिक मुद्दों पर राज्य के नेताओं में परस्पर विश्वास कैसे बहाल हो पाएगा? जबकि केंद्रीय नेतृत्व राजे की लोकप्रिय छवि के बावजूद प्रदेश अध्यक्ष सतीश पूनिया की तरफ़ झुका हुआ है। अंदरूनी सूत्र कहते हैं कि पार्टी आलाकमान राजे का सम्मान तो करते हैं, लेकिन पसन्द पूनिया को ही करते हैं। ऐसे में राजे और पूनिया में तालमेल कैसे बैठ पाएगा? यह गुत्थी इसलिए भी उलझाने वाली है कि राजे पर बढ़ते हमलों ने राज्य में राजे का क़द और ऊँचा ही किया है। राजस्थान में राजे अचानक प्रसिद्ध नेत्री बनकर उभरी हैं। राष्ट्रीय अध्यक्ष इस जटिल समस्या को कैसे निपटाएँगे, यह तो समय ही बताएगा। पूनिया निकाय और पंचायत चुनावों में लोगों में आकांक्षाएँ जगाने में विफल रहे। तो फिर आगे होने वाले चार विधानसभा उप चुनावों में पूनिया क्या कर पाएँगे? कहना मुश्किल है। माना जाता है कि शक्ति संतुलन में राजे ही अहम भूमिका निभा सकती हैं।

लेकिन पार्टी आलाकमान के लिए तो वास्तव में मुश्किल घड़ी है। आख़िर खेल तो अभी शुरू हुआ है। पूनिया राजे से तल्ख़ी की बात को सिरे से नकार रहे हैं। उनका कहना है कि कोई कुर्सी है ही नहीं, तो लड़ाई किस बात की? वह कहते हैं- 'मुझे किसी पद की लालसा नहीं है। मैं प्रदेश अध्यक्ष की अपनी भूमिका से सन्तुष्ट हूँ।' फिर राजे समर्थकों की बयानबाज़ी की ख़बर राष्ट्रीय नेतृत्व को किसने दी? इस सवाल पर पूनिया कहते हैं- 'पार्टी नेतृत्व को विभिन्न माध्यमों से जानकारी रहती है।'

पूनिया भले ही अब सफ़ाई दे रहे हों, लेकिन राजे और उनके बीच काफ़ी समय तक चली अंदरूनी अनबन किसी से छिपी नहीं है। तहलका

tehelkaletters@gmail.com

दुश्मनी और दोस्ती

क्या पूर्वी लद्दाख़ में सैनिकों के पीछे हटने के समझौते के बाद ईमानदारी दिखाएगा चीन ?

सरकार ने संसद में बताया कि पैंगोंग क्षेत्र को लेकर भारत और चीन में समझौता हुआ है। अब दोनों तरफ़ के सैनिक पीछे हटे हैं। इसके बाद रक्षा विशेषज्ञों ने अपने-अपने स्तर पर इसे लेकर बयान दिये हैं। हालाँकि अधिकतर विशेषज्ञों ने इस बात पर चिन्ता जतायी है कि पैंगोंग में सामरिक दृष्टि से चीन के मुक़ाबले भारत कहीं बेहतर स्थिति में था, और यह बढ़त एक तरह से उसके लिए ट्रंप कार्ड की तरह थी। इसमें कोई दो-राय नहीं कि इस क्षेत्र में दोनों देशों की सेनाओं के आमने-सामने होने से तनाव का जो ख़तरा था, वह उनके पीछे हटने से टल गया है। लेकिन सीमा पर चार ऐसे अन्य भारतीय क्षेत्र अभी भी हैं, जहाँ चीन की सेना मौजूद है। हाल में अरुणाचल में चीन द्वारा एक पूरा गाँव बसा लेने की ख़बर आयी थी। ऐसे में समझौते के बावजूद चीन पर कितना भरोसा किया जा सकता है? यही बड़ा सवाल है। दूसरे, चीन और भारत के बीच व्यापार को फिर बहाल करने का दबाव दोनों देशों में है। सभी हालात पर विशेष संवाददाता **राकेश रॉकी** की रिपोर्ट :-

अमेरिका ने जनवरी के मध्य में 10 पृष्ठ का एक दस्तावेज़ सार्वजनिक किया, जिसमें कहा गया था कि भारत सुरक्षा मामलों में अमेरिका का पसंदीदा साझेदार है। 'यूएस स्ट्रैटेजिक फ्रेमवर्क' नाम से इस दस्तावेज़ में यह भी कहा गया कि भारत समान सोच रखने वाले देशों के सहयोग से रणनीतिक रूप से महत्त्वपूर्ण हिन्द-प्रशांत क्षेत्र में चीन के ख़िलाफ़ शक्ति सन्तुलन बनाने का काम करेगा। यह दस्तावेज़ तत्कालीन ट्रंप प्रशासन के समय तैयार हुआ है। व्हाइट हाउस की वेबसाइट पर पोस्ट होने के तुरन्त बाद चीन ने उम्मीद के मुताबिक इस पर बहुत तीखी प्रतिक्रिया दी और कहा कि निवर्तमान डोनाल्ड ट्रंप प्रशासन द्वारा हिन्द-प्रशांत रणनीति की हिमायत का मक़सद चीन को रोकना, क्षेत्रीय शान्ति और स्थिरता को नुक़सान पहुँचाना और क्षेत्र में अमेरिकी दादागीरी को क़ायम रखना है। यह उस समय की बात है, जब सीमा पर तनाव कम करने को लेकर भारत और चीन के बीच माल्दो में सैन्य स्तर की बैठकों का दौर जारी था। इसके तीन हफ़्ते के भीतर चीन भारत के साथ समझौते के तहत एक क्षेत्र- पैंगोंग झील के उत्तर और दक्षिणी तट से सेना और अस्थायी निर्माण हटाने के लिए सहमत हो गया। रक्षा विशेषज्ञों ने इस पर मिली-जुली प्रतिक्रिया दी है। हालाँकि यह कमोवेश सभी ने ही कहा कि चीन पर तत्काल भरोसा नहीं किया जा सकता। इस दौरान जो एक और बड़ी घटना हुई है, वह यह कि भारत ने क़रीब नौ महीने की रोक के बाद चीन से विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआई) प्रस्तावों को केस-टू-केस आधार पर मंज़ूरी देने की पहल कर दी है। चीन के साथ भारत की यह पहल कितनी फलदायी साबित होती है? यह आने वाला समय ही बताएगा।

चीन के साथ भारत की सैन्य स्तरीय बातचीत के कई दौर अभी और होने हैं। राजनयिक स्तर पर भी पर्दे के पीछे बातचीत हो रही है। कारण यह है कि चीन से साथ सेना पीछे ले जाने या अस्थायी निर्माण हटाने का जो पहला समझौता हुआ है, वह तनाव के वृहद क्षेत्र का एक छोटा हिस्सा ही है। भारत और चीन के बीच वास्तविक नियंत्रण रेखा (एलएसी) के इर्दगिर्द के चार इलाक़ों- गोगरा पोस्ट के पेट्रोलिंग पांइट 17ए, पीपी के पास हॉट स्प्रिंग, गलवान घाटी और देपसांग प्लेस पर अभी कोई बातचीत नहीं हुई है। यह वही इलाक़े हैं, जिनके बारे में विशेषज्ञ साफ़ कहते रहे हैं कि चीनी सेना पीएलए ने वहाँ घुसपैठ की है। हालाँकि पैंगोंग के उत्तर और दक्षिण क्षेत्र का समझौता इस लिहाज़ से बहुत अहम है कि वहाँ दोनों देशों की सेनाएँ बिल्कुल आमने-सामने थीं, और जैसा तनाव था, उससे यह ख़तरा बना हुआ था कि दोनों के बीच झड़प हो सकती है। अब वहाँ दोनों ओर की सेनाओं के पीछे हट जाने से यह ख़तरा टल गया है। लेकिन यह तथ्य भी बहुत महत्त्वपूर्ण है कि भारत को यहाँ से पीछे हटने का यह नुक़सान ज़रूर हुआ है कि दक्षिणी पैंगोंग एकमात्र ऐसा क्षेत्र था, जहाँ भारतीय सेना बहुत बेहतर स्थिति में (मोर्चे पर) थी।

चीन के साथ सीमा पर एक हिस्से में विवाद ख़त्म करने और समझौते को लेकर रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने संसद में जानकारी दी। उन्होंने कहा- 'पूर्वी लद्दाख़ में भारत और चीन के बीच छुटकारे (डिसइंगेजमेंट) पर सहमति बन गयी है। पैंगोंग झील के उत्तरी और दक्षिणी तट पर दोनों सेनाएँ फॉरवर्ड सैनिकों (आगे बढ़े सैनिकों) को पीछे करेंगी। चीन जहाँ उत्तरी तट पर फिंगर-8 के पूर्व में जाएगा, वहीं भारतीय फिंगर-3 के पास स्थित मेजर धनसिंह थापा पोस्ट (परमानेंट बेस) पर रहेगी। सिंह ने कहा कि पैंगोंग झील में डिसइंगेजमेंट पूरा होने के बाद दोनों सेनाओं के बीच फिर बात होगी।'

राजनाथ सिंह ने यह भी कहा कि पैंगोंग झील के उत्तरी और दक्षिणी तट पर छुटकारे का समझौता हो गया है। चीन इस बात पर भी सहमत हुआ है कि पूर्ण छुटकारे के 48 घंटे के भीतर सीनियर कमांडर लेवल की बातचीत हो और आगे की कार्यवाही पर चर्चा हो। पैंगोंग झील को लेकर हुए समझौते के मुताबिक, चीन अपनी सेना को फिंगर-8 से पूर्व की ओर रखेगा। इसी तरह भारत भी अपनी सेना की टुकड़ियों को फिंगर-3 के पास अपने परमानेंट बेस (स्थायी बिन्दु) पर रखेगा। सामरिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण कई क्षेत्रों को

‘प्रधानमंत्री ने झुका दिया सिर’

रक्षा मंत्री ने पूर्वी लद्दाख़ में हालात पर संसद में एक बयान दिया। अब हमें पता चलता है कि हमारे सैनिक फिंगर-3 पर तैनात रहेंगे। फिंगर-4 हमारा क्षेत्र है। अब हम फिंगर-4 से फिंगर-3 पर आ गये हैं। मिस्टर मोदी ने हमारा क्षेत्र चीनियों को क्यों दे दिया है? भारत सरकार बातचीत की स्थिति (नेगोशिएटिंग पोजिशन) में थी कि अप्रैल, 2020 में जो हालात थे, वही बहाल हों। उसको सरकार भूल गयी। चीन के सामने नरेंद्र मोदी ने अपना सिर झुका दिया। माथा टेक दिया। हमारी ज़मीन फिंगर-4 तक है। नरेंद्र मोदी ने फिंगर-3 से फिंगर-4 की ज़मीन चीन को पकड़ा दी। प्रधानमंत्री एक कायर हैं, जो चीन के सामने खड़े नहीं हो सकते। यही तथ्य है। वह सेना के बलिदान पर थूक रहे हैं; वह यही कर रहे हैं। वह सेना के त्याग का अपमान कर रहे हैं। भारत में किसी को ऐसा करने की इजाज़त नहीं होनी चाहिए। कड़ी मेहनत के बाद भारतीय सेना ने जो कुछ हासिल किया, अब उनसे क्यों पीछे हटने को कहा गया है? इसके बदले भारत को क्या मिला है? सबसे ज़रूरी बात यह है कि देपसांग मैदान में चीनी पीछे क्यों नहीं हटे हैं? वो गोगरा और हॉट स्प्रिंग्स से पीछे क्यों नहीं गये हैं? हिन्दुस्तान की पवित्र ज़मीन नरेंद्र मोदी ने चीन को पकड़ायी है। यह सच्चाई है।

राहुल गाँधी, कांग्रेस नेता

चिह्नित कर हमारी सेनाएँ वहाँ मौजूद हैं। पूर्वी लद्दाख़ में चीन के ऊपर भारत का ‘एज’ बना हुआ है। सैन्य और राजनयिक स्तर पर हमारी बातचीत हुई है। हमने तीन सिद्धांतों पर ज़ोर दिया है- ‘एलएसी को माना जाए और उसका आदर किया जाए, किसी स्थिति को बदलने का एकतरफ़ा प्रयास न किया जाए और सभी समझौतों का पालन किया जाए।’

रक्षा मंत्री ने कहा कि भारत का लक्ष्य एलएसी पर छुटकारा (डिसइंगेजमेंट) और यथास्थिति बनाने का है। उनके मुताबिक, चीन का 38,000 वर्ग किलोमीटर भारतीय भूभाग पर अनधिकृत क़ब्ज़ा है। सिंह ने कहा कि भारत ने चीन से हमेशा कहा है कि द्विपक्षीय सम्बन्ध दोनों तरफ़ से कोशिश करने पर ही विकसित हो सकते हैं, साथ ही सीमा विवाद भी ऐसे ही सुलझाया जा सकता है। सीमा पर चीन ने जो क़दम उठाये हैं, उससे भारत-चीन के सम्बन्धों पर भी असर पड़ा है। जिस दिन रक्षा मंत्री ने संसद में यह बयान संसद में दिया, उस दिन सेना प्रमुख जनरल एमएम नरवणे भी संसद परिसर में थे। दिलचस्प यह है कि इस समझौते के बाद चीन ने पहली बार आधिकारिक रूप से यह स्वीकार किया कि गलवान में भारतीय सेना से ख़ूनी संघर्ष में जून, 2020 में उसके भी चार सैनिक मारे गये थे। इससे पहले मीडिया रिपोर्ट्स में चीनी सैनिकों की संख्या 40 बतायी जाती रही है। भारत ने तो उसी दिन आधिकारिक रूप से यह स्वीकार कर लिया था कि देश के 20 जवान इस संघर्ष में शहीद हुए हैं। चीनी सेना के आधिकारिक अख़बार पीएलए डेली ने कहा कि मारे गये अफ़सरों में पीएलए की शिनजियांग सैन्य कमान के रेजिमेंटल कमांडर क्वी फेबाओ भी थे। रिपोर्ट में यह भी बताया गया कि चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग की अध्यक्षता वाली सीएमसी ने फेबाओ को हीरो का दर्जा दिया है। फेबाओ के अलावा बटालियन कमांडर चेन हाँगजुन को सीमा की रक्षा करने वाले हीरो और चेन शियांगरांग, शियाओ सियुयान और वैंग झुआरन को प्रथम श्रेणी सम्मान से नवाज़ा गया है। एक और चीनी सैनिक की मौत अपने कमांडर को बचाने के चक्कर में नदी में डूबने से हो गयी थी। चीन के सरकारी मुखपत्र ग्लोबल टाइम्स ने भी एक रिपोर्ट में कहा कि पैंगोंग झील के उत्तरी और दक्षिणी हिस्सों से दोनों ही देशों के सैनिकों के पीछे हटने की प्रक्रिया पूरी हो गयी है। रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने भी संसद में बयान दिया कि चीन ने भारतीय ज़मीन ख़ाली करनी शुरू कर दी है।

हालाँकि संसद में रक्षा मंत्री के बयान के बाद अब कई रक्षा जानकार प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के उस बयान की तरफ़ ध्यान दिला रहे हैं, जिसमें उन्होंने कहा था कि चीन के फ़ौजियों ने हमारी एक इंच ज़मीन पर भी क़ब्ज़ा नहीं किया है। यदि ऐसा नहीं था, तो समझौते के मुताबिक चीन जहाँ से पीछे हटा है, क्या वह उसी का क्षेत्र था? ज़ाहिर है चीन हमारे क्षेत्र से ही पीछे हटा है। इसे यह माना जा रहा है कि राजनाथ सिंह ने संसद के अपने बयान में साफ़ स्वीकार न करके भी चीन के हमारे क्षेत्र में क़ब्ज़े को स्वीकार कर लिया।

विशेषज्ञों ने इस समझौते को लेकर अपने-अपने मत व्यक्त किये हैं। किसी ने इसे सही, तो किसी ने जोखिम भरा कहा है। हालाँकि ज़मीनी हक़ीक़त के लिहाज़ से बहुत-से जानकार चीन की नीयत को लेकर आशंका जता रहे हैं। उनका साफ़ कहना है कि चीन पर भरोसा नहीं किया जा सकता। संसद में रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह की चीन से समझौते से सम्बन्धित घोषणा के बाद देश में इस पर प्रतिक्रियायों का दौर भी शुरू हो गया। सामरिक मामलों के जाने माने विशेषज्ञ ब्रह्म चेलानी ने एक ट्वीट करके कहा- ‘दूसरे सेक्टर्स को लेकर भी स्थिति स्पष्ट होनी चाहिए। जब भी कोई सौदा होता है, तब कुछ देने के बदले में कुछ लिया जाता है। हालाँकि भारत के चीन के साथ समझौते (पैंगोंग इलाक़े) को बहुत सीमित माना जाएगा। ऐसा लगता है कि सर्दियों से पहले चीन ने जो शर्तें रखी थीं, भारत ने उन्हें मान लिया है और पैगोंग इलाक़े को लेकर समझौता करके नो मैन्स लैंड (मानव रहित स्थान) बनाने पर तैयार हो गया है।’

वरिष्ठ पत्रकार वेदप्रताप वैदिक ने कहा- ‘चीन के साथ लद्दाख़ में चल रहे सीमा-विवाद का अब हल होता नज़र आ रहा है। बस वह नज़र आ रहा है। अभी हम यह नहीं कह सकते कि वह हल हो गया है। ऐसा मैं इसलिए कह रहा हूँ, क्योंकि पिछले साल मई में जब चीन के साथ हमारी मुठभेड़ हुई थी, तब टकराव पाँच इलाक़ों में हुआ था। वास्तविक नियंत्रण रेखा (एलएसी) अवास्तविक है। उसे बताने के लिए न तो कोई दीवार खड़ी है, न तार लगे

भारत आएँगे शी जिनपिंग !

'तहलका' की जानकारी के मुताबिक, चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग भारत में होने वाले ब्रिक्स सम्मेलन में शिरकत कर सकते हैं। यदि शी भारत आने के लिए सहमत होते हैं, तो यह बात दोनों देशों के रिश्तों पर जमी बर्फ़ पिघलाने में बड़ा रोल अदा करेगी। चीन ने 23 फरवरी को भारत में होने वाले ब्रिक्स सम्मेलन का समर्थन किया था और कहा था कि वह भारत और अन्य सदस्य देशों के साथ मिलकर विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग मज़बूत करना चाहता है। ज़ाहिर है शी के भारत आने पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से उनकी बैठक की बहुत मज़बूत सम्भावना होगी। हालाँकि इस सम्मलेन को अभी कुछ महीने हैं और इस दौरान भारत में कोविड-19 महामारी की स्थिति भी देखनी होगी। चीनी विदेश मंत्रालय ने एक बयान में कहा- 'चीन ब्रिक्स को बेहद महत्त्व देता है और इसके ज़रिये रणनीतिक साझेदारी को बढ़ाने का पक्षधर है। हम ब्रिक्स देशों के बीच एकजुटता और सहयोग को मज़बूत करना चाहते हैं।' सीमा पर हालात को लेकर चीनी विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता वांग वेनबिन ने कहा- 'भारत के इस साल ब्रिक्स सम्मेलन का आयोजन का चीन समर्थन करता है। चीन भारत और अन्य ब्रिक्स देशों के साथ विभिन्न क्षेत्रों में संवाद और सहयोग बढ़ाना चाहता है। हम अर्थ-व्यवस्था, राजनीति और मानवता के तीन पहियों वाली पहल को भी मज़बूत करना चाहते हैं।' वांग ने यह भी कहा कि ब्रिक्स वैश्विक प्रभाव वाले नये बाज़ार देशों और विकासशील देशों का सहयोग तंत्र है। इधर के कुछ वर्षों में ब्रिक्स देशों की एकजुटता बढ़ रही है। व्यावहारिक सहयोग गहरा हो रहा है और प्रभाव निरंतर बढ़ रहा है। अब यह अंतर्राष्ट्रीय मामले में एक सकारात्मक, स्थिर और रचनात्मक शक्ति बन गया है।

बता दें भारत को 2021 के लिए ब्रिक्स की अध्यक्षता मिली है और वह इसका आयोजन करने की तैयारी में जुट गया है। इसमें कोई दो-राय नहीं कि चीन के अचानक बदलते रुख़ को भारत बेहद सावधानी से देख रहा है। सीमा पर तनाव का असर व्यापारिक और राजनीतिक क्षेत्रों पर भी पड़ा है। अब चीन से आये विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआई) के बड़े प्रस्तावों की भारत सरकार बारीक़ी से जाँच-परख कर रही है। इसके लिए एक समन्वय समिति भी गठित की गयी है।

हैं, न कोई खाई है और न ही कोई नदी है। साल भर दर्ज़नों बार दोनों तरफ़ के सैनिक उसका उल्लंघन जाने-अनजाने करते रहते हैं। अब चीन के साथ समझौते की शुरुआत हुई है, तो शेष सभी मसलों पर भी समझौता हो जाना चाहिए।'

रक्षा मामलों के एक और वरिष्ठ जानकार कर्नल अजय शुक्ला (सेवानिवृत्त) ने कहा- 'जिस क्षेत्र में यह समझौता हुआ है, वह चीन की बनिस्बत भारतीय सेना की पकड़ के लिहाज़ से ज़्यादा बेहतर स्थिति थी। ज़ाहिर है कि वहाँ भारत अनुकूल स्थिति में था। अब छुटकारे को लेकर जो सहमति हुई है, उससे एक तरह का ट्रंप कार्ड हमारे हाथ में नहीं रहा। चीन ने वहाँ से सेना हटाने में बहुत तत्परता दिखायी है, जिस कारण भारत को वैसा ही करना पड़ा। अब मान लें कि यदि चीन अन्य इलाक़ों से छुटकारे पर सहमति नहीं जताता या कुछ और पेच फँसाता है, तो हमारे पास कोई ट्रंप कार्ड नहीं बचा है। हमें उम्मीद करनी चाहिए कि अन्य जगह से भी तत्काल छुटकारे पर ही सहमति बनेगी।'

ब्रह्म चेलानी कहते हैं- 'अभी तक चीन के आक्रामक रवैये के ख़िलाफ़ भारत मज़बूती से खड़ा रहा है। भारत ने साफ़ ज़ाहिर कर दिया कि वह युद्ध की पूरी तैयारी के साथ खड़ा है और सर्दियों के भीषण हालात के बावजूद किसी भी स्थिति का सामना करने को तैयार है। हालाँकि बड़े मुद्दों का हल तलाश करने की जगह भारत क्यों अपनी मुख्य ताक़त कैलाश रेंज से नियंत्रण छोड़ने को लेकर एक सीमित समझौते के लिए तैयार हुआ?'

अभी होती रहेगी गश्त

भारत-चीन में पैंगोंग झील को लेकर समझौता होने के बाद दोनों की सेना भले पीछे हट गयी हो, इंडियन तिब्बत बॉर्डर पुलिस (आईटीबीपी) सीमायी इलाक़े में गश्त (पेट्रोलिंग) करती रहेगी। सरकार के मुताबिक, भारतीय सेना लगातार चीन पर नज़र रख रही है। सबसे ज़्यादा तनाव इसी इलाक़े में था। इस इलाक़े में तय समझौते के मुताबिक, अभी गश्त नहीं की जाएगी। अब जब तक दोनों देशों के बीच गश्त एरिया पर सहमति नहीं बन जाती है, तब तक दोनों देश की सेना देपसांग, गोगरा, हॉट स्प्रिंग और कोंगका ला तक गश्त नहीं करेगी। हालाँकि सेना के मुताबिक, एलएसी पर भारतीय सेना उन एरिया में अभी गश्त करती रहेगी, जिन जगहों पर पहले गश्त किया करती थी। समझौते के मुताबिक, भारतीय सेना फ़िलहाल सिर्फ़ विवादित जगहों पर ही गश्त नहीं करेगी। भारतीय सेना मैदानी इलाक़ों के साथ-साथ इनर एरिया और उत्तराखण्ड की तरफ़ जाने वाले रास्ते में भी गश्त करती रहेगी। चीनी सेना ने झील के उत्तरी हिस्से को ख़ाली कर दिया है। चीनी सेना के बनाये गये जेट्टी, हेलीपैड और दूसरे ढाँचों को भी नष्ट कर दिया गया है। चीनी टैंक पहले ही पीछे हट चुके हैं।

रक्षामंत्री ने भी देश को भरोसा दिलाया है कि जल्द ही एलएसी पर पुरानी स्थिति को बहाल कर लिया जाएगा और यही स्थिति साउथ पोस्ट पर भी रहेगी। उधर आईटीबीपी ने कहा है कि एलएसी पर लद्दाख़ एरिया में भारतीय सेना की तैनाती उसी तरह से रहेगी, जैसे पहले थी। फ़िलहाल लद्दाख़ रीजन में भारतीय सेना की 60 एडिशनल कम्पनियाँ (6,500 जवान) सरहद की रक्षा करने और चीनी सैनिकों को किसी भी साज़िश का मुँहतोड़ जबाव देने के लिए मुस्तैद रहेंगी। हाँ, दोनों देशों के बीच भविष्य में एलएसी के पूरे क्षेत्र में शान्तिपूर्वक डिसइंगेजमेंट हो जाता है, तो आईटीबीपी की तैनाती कम की जाएगी।

चीन में प्रतिक्रिया

समझौते के बाद चीन कम-से-कम मौखिक तौर पर भारत के साथ रिश्ते सुधारने की बात कह रहा है। चीन सरकार के मुखपत्र ने पैंगोंग से सेना और कुछ अस्थायी निर्माण हटाने की तस्वीरें और वीडियो बड़ी तत्परता से अपने मीडिया पर अपलोड किये हैं। यही अख़बार चर्म तनाव के महीनों में लगातार चीनी सैनिकों के युद्धाभ्यास की तस्वीरें और वीडियो भारत पर दबाव बनाने के लिए इसी तत्परता से अपलोड करता था। चीन के मीडिया में भारत से दोस्ती की इक्का-दुक्का बातें इसलिए बहुत महत्त्व नहीं रखतीं; क्योंकि भारत में चीन को लेकर भरोसे की बहुत मज़बूत सधी सोच रहती है। इसका कारण चीन के साथ पिछली घटनाओं का अनुभव है। भारत नहीं, चीन अमेरिका में नये प्रशासन से सम्बन्ध सुधारने को लेकर ज़्यादा दिलचस्पी दिखा रहा है। ट्रंप प्रशासन के समय चीन का अमेरिका से जो लिंक पूरी तरह भंग हो गया था, उसे जीवित करने की कोशिशें शुरू हुई हैं। नेशनल कमेटी ऑन यूएस में चाइना रिलेशन्स को सम्बोधित करते हुए हाल में चीन के वरिष्ठ राजनयिक यांग जिशी ने कहा था कि चीन अमेरिका के साथ सम्बन्धों को आगे बढ़ाने को तैयार है। टकराव छोड़ने पर ज़ोर देते हुए उन्होंने परस्पर सम्मान और दोनों पक्षों को लाभ पहुँचाने वाले सहयोग को मज़बूत करने पर ज़ोर दिया और इसे सम्भव बताया। जिशी का यह बयान इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि इससे कुछ दिन पहले अमेरिका में जो बाइडन प्रशासन ने अमेरिका-चीन के बीच हुए व्यापार समझौते के पहले चरण की समीक्षा करने की बात कही थी। यदि ऐसा होता है, तो ईरान को लेकर ट्रंप के फ़ैसले के बाद बाइडन का यह दूसरा बड़ा फ़ैसला होगा। चीन कोविड-19 महामारी के बावजूद 2020 में यूरोपीय संघ का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार बन गया। ऐसे करते हुए उसने अमेरिका को पीछे छोड़ा। पिछले साल चीन और यूरोपीय संघ के बीच व्यापार 709 अरब डॉलर का रहा, जो संघ के साथ अमेरिका के 671 अरब डॉलर के मुक़ाबले कहीं ज़्यादा है। चीन की अर्थ-व्यवस्था महामारी कोरोना वायरस के कारण पहली तिमाही में ख़राब हो गयी थी, लेकिन साल के आख़िर में आर्थिक स्थिति सुधरने के कारण यूरोपीय संघ के सामानों की माँग बढ़ी। साल 2020 में प्रमुख वैश्विक अर्थ-व्यवस्थाओं में चीन ही एकमात्र देश था, जहाँ आर्थिक विकास सामने आया। वैसे यूरोस्टैट के फरवरी में जारी आँकड़ों को देखें, तो पता चलता है कि चीन के साथ यूरोपीय संघ का व्यापार घाटा 199 अरब डॉलर से बढ़कर 219 अरब डॉलर हो गया है।

व्यापार ही चीन और भारत के बीच हालत को सामान्य करने की सबसे बड़ी कड़ी बन सकता है। दोनों ही देशों में व्यापार पक्ष सम्बन्ध सामान्य होने की कृपना ही नहीं करता है, बल्कि इसके लिए बाक़ायदा लॉबिंग भी करता है। साल 2020 में भारत में नकारात्मक वृद्धि दर के बाद अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) ने अब 2021 में भारत की आर्थिक वृद्धि दर 11.5 फ़ीसदी रहने का अनुमान लगाया है। संसद में पेश किये गये आर्थिक सर्वे में भी 2021-22 वित्त वर्ष में भारत की वृद्धि दर के 11 फ़ीसदी रहने का अनुमान जताया है। दुनिया की बड़ी अर्थ-व्यवस्थाओं के बीच भारत एकमात्र ऐसा देश है, जिसकी वृद्धि दर दो अंकों में रहने का अनुमान है। आईएमएफ के अनुमान के मुताबिक, चीन 2021 में 8.1 फ़ीसदी की आर्थिक वृद्धि दर के साथ दूसरे स्थान पर होगा। आईएमएफ ने साल 2020 के आँकड़ों को संशोधित करते हुए बताया है कि 2020 में भारतीय अर्थ-व्यवस्था में आठ फ़ीसदी की गिरावट का अनुमान है। चीन एकमात्र बड़ा देश है, जिसकी वृद्धि दर 2020 में 2.3 फ़ीसदी रहने का अनुमान है।

आईएमएफ के मुताबिक, 2022 में भारत की आर्थिक वृद्धि दर 6.8 फ़ीसदी और चीन की 5.6 फ़ीसदी रहने की सम्भावना है। अर्थशास्त्री इसे

व्यापारिक रिश्तों का दबाव

चीन की सरकार पर वहाँ की कम्पनियाँ का भी बड़ा दबाव है; क्योंकि भारत चीनी उत्पादों के लिए एक बड़ा बाज़ार है। चीनी कम्पनियाँ भारत में माल भेजकर साल भर अरबों रुपये कमाती हैं, जो दोनों देशों तनाव के बाद बन्द हो गया है। चीन भारत के सबसे बड़े कारोबारी साझेदार में से एक रहा है। कई क्षेत्रों में चीन की भारत में गहरी घुसपैठ है। तनाव से पहले स्मार्टफोन के 65 फ़ीसदी बाज़ार पर चीनी कम्पनियों का क़ब्ज़ा है; जबकि भारत के स्टार्टअप में चीन की कम्पनियों का ख़रबों डॉलर का निवेश है। भारत के कुल विदेशी व्यापार में चीन की हिस्सेदारी 10.1 फ़ीसदी है। भारत के कुल निर्यात में चीन का हिस्सा महज़ 5.3 फ़ीसदी है, जबकि कुल आयात में चीन का हिस्सा 14 फ़ीसदी रहा है। जून में दोनों देशों के बीच तनाव से पहले की स्थिति पर ग़ौर करें, तो पता चलता है कि चीन और हॉन्गकॉन्ग का व्यापार जोड़ लिया जाए, तो यह दोनों भारत के अमेरिका से भी बड़े व्यापारिक साझेदार बन जाते हैं। रिकॉर्ड के मुताबिक, 2019-20 में चीन-हॉन्गकॉन्ग से भारत का कुल व्यापार 103.53 अरब डॉलर (क़रीब 7,88,759 करोड़ रुपये) का हुआ, जबकि इसी दौरान अमेरिका के साथ यह इससे कम 82.97 अरब डॉलर (क़रीब 6,32,120 करोड़ रुपये) था। यदि ख़रीद क्षमता (परचेजिंग पॉवर) के हिसाब से देखें, तो भी चीन सबसे बड़ी अर्थ-व्यवस्था है। वह दुनिया का सबसे बड़ा निर्यातक है। विदेशी निवेश में उसकी अधिशेष बचत (सरप्लस सेविंग्स) सबसे ज़्यादा हैं। टेलिकॉम, सोलर एनर्जी, इलेक्ट्रिक रिक्शा और स्टोरेज बैट्रीज में वह वर्ल्ड लीडर (विश्व नेता) है। गलवान में दोनों देशों के सैनिकों की ख़ूनी भिड़ंत के बाद भारत की तरफ़ से प्रतिबन्ध लगाये गये थे; क्योंकि देश में चीन के ख़िलाफ़ ग़ुस्से की लहर थी। चीनी उत्पादों की बिक्री के बहिष्कार की माँग के बाद मोदी सरकार ने यह क़दम उठाया था। अब चीन के साथ समझौते के बाद इस पर दोबारा विचार की प्रक्रिया शुरू हो चुकी है। भारत ने पहले चीन के उत्पादों पर आयात शुल्क बढ़ा दिया था। अब इस पर पुनर्विचार हो सकता है। साउथ चाइना-सी को लेकर आसियान देशों ने चीन के बायकॉट की नहीं, मज़बूत सहयोगी बनाने की रणनीति अपनायी थी।

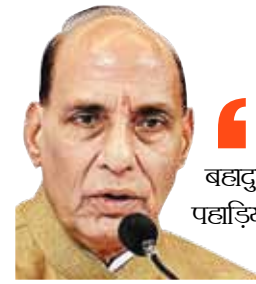

“भारतीय सुरक्षा-बल बहुत बहादुरी से लद्दाख की ऊँची दुर्गम पहाड़ियों और कई मीटर बर्फ़ के बीच भी सीमाओं की रक्षा करते हुए अडिग हैं और इसी कारण वहाँ हमारी पकड़ बनी हुई है। हमारी सेनाओं ने इस बार भी यह साबित करके दिखाया है कि भारत की सम्प्रभुता और अखण्डता की रक्षा करने में वे सदैव हर चुनौती से लड़ने के लिए तत्पर हैं। टकराव वाले इलाक़ों में छुटकारे के लिए भारत का यह मत है कि 2020 की सैन्य तैनाती (फॉरवर्ड डेपलॉयमेंट्स) में जो सेनाएँ एक-दूसरे के बहुत नज़दीक हैं, वो दूर हो जाएँ और दोनों सेनाएँ वापस अपनी-अपनी स्थायी और मान्य चौकियों पर लौट जाएँ। हमारी रणनीति और दृष्टिकोण प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के दिशा-निर्देश पर आधारित है कि हम अपनी एक इंच ज़मीन भी किसी और को नहीं लेने देंगे। हमारे दृढ़ संकल्प का ही यह फल है कि हम समझौते की स्थिति पर पहुँच गये हैं। अभी तक सीनियर कमांडर्स के स्तर पर 10 दौर की बातचीत हो चुकी है। मैं सदन को आश्वस्त करना चाहता हूँ कि इस बातचीत में हमने कुछ भी नहीं खोया है। मैं सदन को यह जानकारी भी देना चाहता हूँ कि अभी भी वास्तविक नियंत्रण रेखा पर तैनाती और गश्त से जुड़े कुछ विषय बचे हैं। आगे की बातचीतों में इन पर हमारा ख़ासतौर पर ध्यान रहेगा। चीन भी भारत की सम्प्रभुता की रक्षा के हमारे संकल्प से अवगत है। यह अपेक्षा है कि चीन साथ मिलकर बचे हुए मुद्दों को हल करने का प्रयास करेगा।

राजनाथ सिंह, रक्षा मंत्री

अच्छा संकेत तो मान रहे हैं, लेकिन साथ ही उनका कहना है कि अभी अर्थ-व्यवस्था में रिकवरी की स्थिति नहीं आयी है। उनका कहना है कि आँकड़े का इतना बड़ा होने का आधार गणितीय ज़्यादा है। उनका कहना है कि असंगठित क्षेत्र और इसमें काम करने वाले लोगों पर पर कोरोना वायरस और लॉकडाउन के प्रभाव का पता चलने पर ही सही जीडीपी का भी अनुमान लगेगा कि अर्थ-व्यवस्था में कितना सुधार हुआ? इसकी गणना जीडीपी के आधार पर ही ठीक से की जा सकती है।

अग्नि परीक्षा से कम नहीं अमेरिका से रिश्ते मज़बूत करना

अमेरिका में जो बाइडन सरकार आने के बाद यह संकेत मिलते हैं कि कुछ ऐसे तथ्य हैं, जो दोनों देशों के बीच रिश्तों को मज़बूत करने के मामले में अग्नि परीक्षा बनेंगे। हाल में किसान आन्दोलन सहित विदेशों, ख़ासकर अमेरिका में प्रतिक्रिया देखने को मिलायी है, उससे यह सवाल और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है। भारत में धार्मिक स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति की आज़ादी एक ऐसा मुद्दा

चीन की सेना ने अपने बयान में सिर्फ़ पैंगोंग झील से पीछे हटने की बात कही है। जबकि चीन ने डेपसांग समेत कुछ अन्य इलाक़ों में भी अतिक्रमण किया है। इस इलाक़े को लेकर कमांडर स्तर की वार्ता होनी अभी बाक़ी है। चीन की सेना ने जो बयान जारी किया है, उसमें कहीं भी अप्रैल, 2020 से पहले की स्थिति में लौटने की बात नहीं है। लेकिन भारतीय मीडिया ने चीनी सेना के बयान से चुनिंदा बातें उठा ली हैं और भारत सरकार ऐसी फँसी हुई स्थिति में है कि चीन की सेना का बयान आने के 24 घंटे बाद भी भारतीय सेना का कोई बयान नहीं आता, बल्कि संसद से राजनीतिक बयानबाज़ी होती है।

ब्रह्मा चेलानी, रक्षा विशेषज्ञ (एक ट्वीट में)

है जिस पर अमेरिका का रुख़ भारत को असहज स्थिति में डाल सकता है और व्यापार के कुछ मसलों पर भी यही स्थिति है। डोनाल्ड ट्रंप के कार्यकाल के उलट अब स्थिति बदली है। भारत-पाकिस्तान, भारत-चीन को लेकर ट्रंप बहुत मज़बूती से भारत के साथ खड़े दिखे थे। अमेरिका की नीति भारत को चीन के ख़िलाफ़ एक मज़बूत काउंटर बैलेंस के चश्मे से देखने की रही है। जो बाइडन के कार्यकाल में यह रुख़ तो शायद न बदले, लेकिन लोकतंत्र के गिरते ग्राफ के प्रति अमेरिका भारत से अलग राय रख सकता है। चीन से भारत के सम्बन्ध बेहतर करने की कोशिश को भी इसी नज़रिये से देखा जा सकता है। चीन के साथ तनाव के समय ट्रंप को लेकर यह राय मानी जाती थी कि वह भारत का साथ देंगे। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और ट्रंप ने उस दौर में कई बार बात भी की थी। लेकिन बाइडन के मामले में यही दावा नहीं किया जा सकता। देश और विदेश में जो लोग प्रधानमंत्री मोदी के सत्ताकाल के आलोचक रहे हैं, वे यह मानते हैं कि भारत में लोकतांत्रिक और धर्म-निरपेक्ष नींव बहुत कमज़ोर हुई है। उनका आरोप रहा है कि मीडिया और न्यायिक व्यवस्था में मौजूद अपने समर्थकों के बूते मोदी ऐसा कर रहे हैं। मोदी सरकार के तीन कृषि क़ानूनों के ख़िलाफ़ आन्दोलन कर रहे किसानों को भाजपा के बड़े नेताओं और समर्थकों का देशद्रोही और आतंकवादी कहना विदेशों में बहुत लोगों को रास नहीं आया है। इनमें अमेरिका भी शामिल है, जहाँ कुछ संस्थाओं ने इस पर तीखी टिप्पणियाँ की हैं। चीन ने जम्मू कश्मीर के हिस्से करके उसका विशेष दर्जा करने का विरोध किया था। दिलचस्प यह है कि अमेरिका के राष्ट्रपति जो बाइडन भी अपने चुनाव प्रचार में इसका सख़्त विरोध करते रहे हैं। कश्मीर में स्वायत्तता ख़त्म करने और वहाँ सुरक्षा और संचार सम्बन्धी कड़े क़दम उठाने के मोदी सरकार के फ़ैसले को भी विदेशों में आलोचना सहनी पड़ी थी। उनकी डेमोक्रेटिक पार्टी मानवाधिकार की प्रबल समर्थक रही है। ऐसे में अमेरिका के साथ सम्भावित तनाव के बिन्दुओं को देखते हुए चीन से भारत के रिश्ते बेहतर करने की कोशिश के अपने निहित अर्थ निकलते हैं। तहलका

tehelkaletters@gmail.com

चीन के कई एफडीआई प्रस्ताव होंगे मंज़ूर

चीन के साथ फरवरी के समझौते के बाद भारत में चीन से जुड़ी व्यापारिक गतिविधियों में भी हलचल दिखने लगी है। भारत सरकार चीन के साथ विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआई) के प्रस्तावों को केस-टू-केस आधार पर मंज़ूरी देने की तैयारी कर रही है। फ़िलहाल तनाव के इन नौ महीनों में भारत सरकार ने पड़ोसी देशों के प्रस्तावों को रोका हुआ था।

'तहलका' की जानकारी के मुताबिक, चीन से सीमा पर समझौते से पहले ही जनवरी से चीन के एफडीआई प्रस्तावों पर विचार और मंज़ूरी का काम शुरू हो गया था; भले ही अभी तक इसे विस्तार नहीं दिया गया है। लेकिन सम्भावना है कि निकट भविष्य में इसका रास्ता भी खुल सकता है। सरकार पड़ोसी देश से मिल रहे एफडीआई के बड़े प्रस्तावों पर भी विचार कर सकती है और आने वाले दिनों में समझौते की स्थिति का आकलन किया जाएगा। सरकार एक समन्वय समिति इसके लिए पहले ही गठित कर चुकी है। इसमें कॉमर्स और इंडस्ट्री मंत्रालय के अलावा नीति आयोग और गृह और विदेश मंत्रालयों के वरिष्ठ अफ़सरों को शामिल किया गया है। यह समिति विशेष रूप से चीन से आये प्रस्तावों की समीक्षा (स्क्रूटनी) करेगी। हाल के वर्षों में चीन से टेक्नोलॉजी और डिजिटल स्पेस में चीन से काफ़ी निवेश आया है। फ़िलहाल केंद्र सरकार दोनों देशों में तनाव और कोविड-19 के कारण भारत में चीन के क़रीब 12,000 करोड़ रुपये के एफडीआई प्रस्ताव की मंज़ूरी के इंतज़ार में है। हाल के महीनों में भारत ने सीमा तनाव के चलते टिकटॉक सहित चीन के 50 से ज़्यादा मोबाइल ऐप्स पर पाबंदी लगा दी थी। भारत कह चुका है कि राष्ट्रीय सुरक्षा के मामले में कोई समझौता नहीं किया जाएगा। हालाँकि भारत में बहुत-से जानकार मानते हैं कि भारत सरकार अब नये हालात में चीन के एफडीआई और निवेश प्रस्तावों की खिड़की खुली रखना चाहती है। ज़ाहिर इससे लॉकडाउन में रोज़गार पर बुरी तरह पड़ी मार से उबरने में भी मदद मिलेगी। चीन से भारत में खिलौनों से लेकर तमाम चीज़ें बड़े पैमाने पर बिकती रही हैं। यहाँ तक की रोक और तनाव के समय में भी भारतीय बाज़ार में पहले से पड़ी चीन की चीज़ें बाज़ार में बिकती रहीं।

चीन से समझौता ठीक लेकिन विश्वास नहीं !

राजीव दुबे

भारत-चीन के बीच चला आ रहा सीमा विवाद भले ही भारत ने राजनीति और कूटनीति के बलबूते पर सुलझा लिया है। पर भारत को अतीत के अनुभवों को देखते हुए चीन से अब ज़्यादा सतर्क रहने की ज़रूरत है। क्योंकि कई बार जो दिखायी देता है, दरअसल वो होता नहीं है। चीन की सोच में यह है कि वह अपने विस्तार को अतीत में समेटकर विस्तारवादी सोच पर विस्तार करने में देर नहीं करता है। तहलका संवाददाता ने चीनी चालों और हुए एलओसी समझौते पर जानकारों से बात की। उनका मामना है कि चीन भली-भाँति जान गया है कि भारत के साथ आर्थिक और सामरिक दृष्टि से समझौते के बग़ैर मामला बनने वाला नहीं है। भारत के साथ व्यापारिक हित की न तो चीन उपेक्षा कर सकता है और न ही नज़रअंदाज़। दिल्ली यूनिवर्सिटी के प्रो. व चिंतक हरीश खन्ना का कहना है कि चीन-भारत के बीच जो समझौता हुआ है, वो स्वागत योग्य है। लेकिन चीन की चालों से हमें सतर्क रहना होगा और चौतरफ़ा सावधानी बरतनी होगी। क्योंकि चीन का इतिहास भरोसे के लायक कभी नहीं रहा है। प्रो. हरीश खन्ना का कहना है कि सन् 1962 का युद्ध उन्होंने देखा है। तबसे लेकर अब तक चीन के नेता भारत में आकर कहते रहे हैं कि हिन्दी-चीनी भाई-भाई। लेकिन मौक़ा मिलते ही चीन ने दुश्मनी दिखायी। इसी तरह ये दोनों देशों के बीच जो शान्ति समझौते की झलक दिखायी जा रही है। वो हमें तामाम तरह से सतर्क रहने की और इशारा करती है। अगर ज़रा-सी चूक हुई, तो परिणाम घातक भी हो सकते हैं।

विदेशी मामलों के जानकार डॉ. के.के. कपूर का कहना है कि बीते साल मई में पूर्वी लद्दाख़ में भारत और चीन के बीच तनाव, टकराव हुआ था। गलवान में जून में ख़ून-ख़राबा हुआ। फिर 10 फरवरी, 2021 को यह घोषणा की गयी कि दोनों देशों के बीच कई दौर की बातचीत के बाद लद्दाख़ स्थित पैंगोंग झील के उत्तरी-दक्षिणी किनारों से सैनिक हट रहे हैं। इसकी पुष्टि सैटेलाइट से प्राप्त तस्वीरों से होती है। जो अब तक के इतिहास में चीन का अपने आप में अनोखा रूप है। सबसे बड़ी बात यह भी सामने आयी है कि चीन ने गलवान घाटी में अपने सैनिकों के मारे जाने की बात स्वीकार की है।

कहते हैं कि परिस्थितियाँ व नेतृत्व के बदलने से निष्कर्ष बदल जाते हैं। यह चीन के बदलाब में साफ़ देखा जा रहा है। जानकारों का कहना है कि चीन में भी आंतरिक स्थिति सब कुछ ठीक नहीं है। वहाँ पर भी लोग शान्ति से रहना चाहते हैं। लेकिन चीन भारत के साथ हुए समझौते पर कितना अमल करता है? यह तो आने वाला समय ही बतायेगा। क्योंकि चीन पर सन्देह होना स्वाभाविक है।

जेएनयू के छात्र आशुतोष का कहना है कि कई बार सरकार अपनी उपलब्धियों की गाथा इस क़दर गाती है कि वो आत्ममुग्ध हो जाती है। भारत ने अपने अधिकारों को ही वापस लिया है, न कि दुश्मनों को खदेड़ा है। यह बात समझने की ज़रूरत है। चीन की हरकतें और फ़ितरत को सारी दुनिया जानती भी है और मानती भी है। इस लिहाज़ से चीन की उस हरकत पर ग़ौर करना होगा, जिसके चलते यह समझौता हुआ है। उनका कहना है कि चीन में आये अचानक बदलाव को हम सकारात्मक तो कह सकते हैं, लेकिन यह उसकी उदारता नहीं है। उदार तो भारत रहा है।

हमें उसके घाती स्वभाव को बिल्कुल नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए।

विदेशी मामलों के जानकार व रक्षा विशेषज्ञ डॉ. अमित सिंह का कहना है कि चीन और भारत के बीच जो भी समझौता हुआ है, उसे फ़िलहाल की ही शान्ति मानिए। क्योंकि चीन का रवैया विश्वासघात वाला रहा है, जिसे नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए। अमित सिंह का कहना है कि भारत की कूटनीति और हमारे देश के नेतृत्व की धमक के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय दबाव का ही नतीजा है कि चीन को समझौता करने को मजबूर होना पड़ा है। अमित सिंह का कहना है कि चीन के पड़ोसी मुल्क चीन की चालों के कारण परस्पर सम्बन्ध ठीक न होने की दुहाई देते रहे हैं। चीन अपनी छिपी चालों के तहत किसी भी पड़ोसी मुल्क में विस्तारवादी सोच के तहत 10 क़दम घुसता है और शोर-शराबा होने तथा दबाव बढ़ने पर बमुश्किल दो क़दम पीछे हटता है। अमित सिंह का कहना है कि इस समय जो समझौता हुआ है, उसके पीछे चीन का घरेलू कलह के साथ-साथ अमेरिका का चीन के प्रति कड़ा रुख़ का होना है। क्योंकि चीन तो यह मानता था कि अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के हटते ही वहाँ के नये राष्ट्रपति जो बाइडन से उसके रिश्ते सामान्य हो जाएँगे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ, बल्कि अमेरिका ने चीन को हिदादत देनी शुरू कर दी। कोरोना-काल में दुनिया भर में चीन की साख पर बट्टा लगा है। इन्हीं तामाम पहुलओं पर परत-दर-परत उलझनों में फँसे चीन को एलओसी मामले पर समझौता करने को मजबूर होना पड़ा है। मौजूदा समय में चीन का विरोध अमेरिका, भारत के साथ-साथ रूस भी कर रहा है। चीन ने पड़ोसी मुल्क पाकिस्तान पर भी बहुत पैसा ख़र्च किया है। उसका उसे कोई विशेष लाभ मिलता नहीं दिख रहा है। ऐसे हालात में चीन की राजनीति, कूटनीति और विस्तारवादी नीति, सब असफल हुई हैं। ऐसे में चीन विवशता के कारण शान्ति की बात कर रहा है।

एक मुद्दा यह भी

देश की सियासत हो या पड़ोसी मुल्कों से उठापटक की सियासत, इसके पीछे के व्यापारिक हितों को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। दिल्ली के व्यापारियों का कहना है कि चीन अपनी हेकड़ी भले ही रणनीति और कूटनीति के तौर पर कुछ भी दिखा ले, लेकिन भारत में अपने बड़े व्यापार के चलते बहुत समय तक हेकड़ी नहीं दिखा सकता। अपने व्यापारिक हितों की वह न तो उपेक्षा कर सकता है और न उन्हें नज़रअंदाज़ कर सकता है। दिल्ली सदर बाज़ार एसोसिएशन के अध्यक्ष राकेश यादव का कहना है कि दो देशों के बीच आपसी तालमेल तभी तक मज़बूत रहते हैं, जब तक उनका हित सधा रहे। चीन भली-भाँति जानता है कि कोरोना-काल में भारत के नेताओं के साथ-साथ आम नागरिकों ने भी उसके सामान का बहिष्कार किया था। इससे चीन को काफ़ी नुक़सान हुआ है। अन्य देशों की तरह चीन भी मंदी के दौर से गुज़र रहा है। इसलिए अभी हाल में चीन भारत के साथ उलझने का साहस नहीं कर सकता है।

व्यापार मंडल के नेता विजय प्रकाश जैन का कहना है कि चाहे युद्ध हो या एक-दूसरे को साधने की कोशिश, दोनों के पीछे व्यापारिक हित छिपे होते हैं। युद्ध के बाद निर्माण और शान्ति के पीछे भी व्यापारिक हित छिपा होता है। चीन के सामान का होली के त्यौहार में भारत में बड़ा बोलबाला रहता है, जिसके ऑर्डर भी हो गये हैं। सामान की ख़ेपें आने लगी हैं। ऐसे में भारत-चीन के बीच किसी प्रकार का तनाव दोनों देशों के हित में नहीं है। दिल्ली के व्यापारी ओम प्रकाश गर्ग का कहना है कि एलओसी पर तनाव को कम करने के लिए जो शान्ति समझौता हुआ है, उसके पीछे व्यापारिक हित हैं।

करोल बाग़ के व्यापारी सन्नी का कहना है कि देश में व्यापारिक गतिविधियाँ कमज़ोर पड़ी हैं। दुनिया भर में राजनीतिक तौर पर असमंजस व तनाव का माहौल है। भारत-चीन के एलओसी समझौते का वह स्वागत करते हैं। लेकिन भारत में चीन की छवि पीठ में छुरा घोंपने वाली रही है। ऐसे में चीन का मक़सद सिर्फ़ और सिर्फ़ व्यापारिक हित के अलावा कुछ भी नहीं है। 15-16 जून, 2020 की रात गलवान घाटी में उसने अकारण ही 20 भारतीय सैनिकों को शहीद कर दिया। तब देश के अधिकतर सियासतदानों और आम नागरिकों ने चीनी समान का बहिष्कार कर चीनी सामान की होली जलायी थी। सरकार ने भी चीन के तमाम ऐप सहित अन्य व्यापारिक गतिविधियों पर रोक लगायी थी, जिससे चीन को काफ़ी आर्थिक नुक़सान हुआ था। चीन को भी मालूम है कि भारत ने भी चीन के विकृप के तौर पर निर्माण के तौर काफ़ी विकास कर लिया है। अगर समय रहते चीन नहीं चेता, तो आने वाले दिनों में उसकी गतिविधियाँ कमज़ोर हो सकती हैं; जो उसके हित में नहीं होंगी। जानकारों का कहना है कि भारत-चीन के व्यापारियों का दबाव भी है कि व्यापार की कड़ी दोनों देशों की बीच न पड़े कमज़ोर, सतत् गतिविधियाँ चलती रहनी चाहिए।

आम लोगों का कहना है कि वैसे तो पड़ोसी देशों को आपसी तालमेल के साथ रहना ही चाहिए, लेकिन चीन की आदत ठीक नहीं है। वह पीठ में छुरा घोंपने में माहिर है। यही वजह है कि चीन के सामान को इस्तेमाल करने का मन नहीं करता। अगर भारत सरकार देश के उद्योगपतियों को सामान बनाने के लिए प्रोत्साहित करे और हमारे यहाँ चीन से कम दाम में उतना या उससे अच्छा सामान बनने लगे, तो यह पक्का है कि कोई भी भारतीय चीन का सामान नहीं ख़रीदेगा। लेकिन राजनीति में सब अपने-अपने हित साधने में लगे हैं। यही वजह है कि बहुत तरह की चीज़ों के लिए देश को चीन पर निर्भर रहना पड़ रहा है। हमें अपने यहाँ निर्माण कार्य बढ़ाकर चीन को मुँहतोड़ जवाब देना चाहिए। इससे हमारी अर्थ-व्यवस्था भी मज़बूत होगी, साथ ही चीन भी कमज़ोर होगा और डरेगा।

tehelkaletters@gmail.com

गाँवों में पहुँच रहा किसान आन्दोलन

राकेश रॉकी

किसान आन्दोलन अब तेज़ी से हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश के गाँवों में पहुँच गया है। किसानों के साथ मज़दूर, ख़ास पंचायतें और आम ग्रामीण भी जुड़ गये हैं, जबकि उत्तर प्रदेश में तो ख़ास चौधरी खुले रूप से किसानों के समर्थन में दिखने लगे हैं। शामली में भाजपा प्रतिनिधिमण्डल के साथ जैसा सुलूक ख़ास के लोगों ने किया, उसने पार्टी की सरकार समेत राज्य के सांसदों, विधायकों और भाजपा नेताओं को चिन्ता में डाल दिया है। राजनीतिक रूप से भाजपा के लिए बहुत ज़रूरी उत्तर प्रदेश में किसान आन्दोलन जितना मज़बूत होता जाएगा, पार्टी के लिए उतनी दिक़्क़तें बढ़ती जाएँगी। पंजाब के निकाय चुनाव में तो जिस तरह भाजपा का सूपड़ा साफ़ हुआ है, उससे यह तो साफ़ हो गया है कि किसान आन्दोलन अब राजनीतिक रूप से भी गहरा असर दिखाने लगा है।

दिल्ली की सीमाओं पर भी किसान अभी डटे हैं और आन्दोलन गाँव-गाँव में भी पहुँच रहा है। केंद्र सरकार ने भले दिल्ली की सीमाओं की सड़कों पर बड़ी-बड़ी कीलें ठोककर और गहरे गड्ढे खोदकर किसानों का रास्ता रोक लिया हो, उत्तर प्रदेश और हरियाणा के गाँवों में आन्दोलन के अपने स्तर पर पनपने से सरकार रोक नहीं पायी है। और अब तो यह बड़े पैमाने पर पाँव जमाता दिख रहा है। यह रिपोर्ट लिखे जाने के समय तक गाँव-गाँव में किसानों ने कृषि क़ानूनों के ख़िलाफ़ और एमएसपी को क़ानून के दायरे में लाने के समर्थन में एक नहीं सैकड़ों मोर्चे खड़े कर दिये हैं। किसान आन्दोलन का असर राजनीतिक रूप से बहुत महत्वपूर्ण पश्चिमी उत्तर प्रदेश के साथ-साथ हरियाणा और राजस्थान में भी दिख रहा है, जहाँ किसान गाँवों में महापंचायतों का आयोजन कर रहे हैं। इनमें बड़ी संख्या में भीड़ जुट रही है। उत्तर प्रदेश में तो भाजपा को चुनौती देने के लिए प्रदेश कांग्रेस अपनी नेता प्रियंका गाँधी के साथ अब तक आधा दर्ज़न किसान पंचायतें कर चुकी हैं। किसानों की अपनी महापंचायतों में जिस तरह बड़ी भीड़ जुट रही है, उससे राजनीतिक हलक़ों, ख़ासकर भाजपा में खलबली है। उत्तर प्रदेश में लम्बे समय के बाद ख़ास पंचायतें किसी एक मुद्दे पर एकजुट दिख रही हैं। इसे भाजपा के लिए ख़तरे की घंटी माना जाएगा। किसानों की इस नयी रणनीति से भाजपा में साफ़तौर पर बेचैनी महसूस की जा रही है। जिस तरह किसान आन्दोलन गाँव-गाँव अलख जगा चुका है, वह भाजपा को विधानसभा के अगले साल होने वाले चुनावों में भारी पड़ सकता है। एक महीना पहले तक उत्तर प्रदेश में भाजपा ने इस तरह की स्थिति की कृपना तक नहीं की थी; लेकिन अब स्थिति उसे हाथ से बाहर जाती दिख रही है।

हरियाणा और उत्तर प्रदेश के बाद किसान नेता प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के गृह राज्य गुजरात में भी पहुँचने वाले हैं। किसान नेता राकेश टिकैत 22 फरवरी को इसका ऐलान कर चुके हैं। इस तरह राजनीतिक न होते हुए भी किसान आन्दोलन भाजपा शासित राज्यों में उसके लिए मुश्किलें खड़ी वाला आन्दोलन साबित होता दिख रहा है। राजस्थान में भी किसान आन्दोलन शुरू हो चुका है, लेकिन वहाँ कांग्रेस सरकार किसानों की माँगों के साथ खड़ी है। इसलिए सरकार या कांग्रेस को आन्दोलन का नुक़सान शायद नहीं होगा, भाजपा को ही नुक़सान उठाना पड़ेगा। मध्य प्रदेश में तो किसान आन्दोलन पहले भी सरकारों को हिला चुका है, लिहाज़ा वहाँ भी इसका नुक़सान भाजपा को ही उठाना पड़ेगा। वैसे आन्दोलन में तो महाराष्ट्र, तमिलनाडु और उत्तराखण्ड के किसान भी शामिल हो चुके हैं। हाल में पश्चिमी उत्तर प्रदेश के मुज़फ़्फ़रनगर जनपद में एक किसान ने तो किसानों की माँगों को लेकर अपनी एक एकड़ में गेहूँ की खेती को ही ट्रैक्टर (रुटरी) चला कर नष्ट कर दिया। कुछ और जगहों पर भी किसान अपनी फ़सलें उजाड़ चुके हैं। हालाँकि किसान नेता राकेश टिकैत ने इसके बाद में अपील की किसान अपनी खड़ी फ़सलें नष्ट न करें, क्योंकि यह राष्ट्र की धरोहर है। किसान आन्दोलन में सबसे बड़ी ताक़त यह दिख रही है कि उसमें ग्रामीण महिलाएँ भी बड़ी संख्या में जुट रही हैं। बहुत दिलचस्प बात यह है कि किसान आन्दोलन के हक़ में शहरों से चलने वाले सोशल मीडिया के सन्देश गाँव-गाँव में पहुँच चुके हैं। इससे आन्दोलन को ताक़त मिली है।

मंत्री का अपने ही इलाक़े में विरोध

कृषि क़ानूनों को लेकर केंद्र सरकार की मुश्किलें तब और बढ़ती दिखीं, जब भाजपा के कई नेता और मोदी सरकार में राज्यमंत्री संजीव बालियान को ख़ास चौधरियों से मिलने की कोशिश में भैंसवाल में जबरदस्त विरोध झेलना पड़ा। उनके अपने इलाक़े में पड़ने वाले शामली में तो ग्रामीणों ने मंत्री और अन्य भाजपा नेताओं को गाँव में घुसने से रोक दिया। यही नहीं उनके मुर्दाबाद के नारे भी लगाये गये। संजीव बालियान ने जब कहा कि 10 किसानों के मुर्दाबाद बोलने से वह मुर्दाबाद नहीं हो जाएँगे। इस पर ग्रामीण भड़क गये और उन्होंने जमकर नारेबाज़ी कर मंत्री और भाजपा नेताओं को अपना क़ाफ़िला वापस शामली की ओर मोड़ने के लिए मजबूर कर दिया।

चुनावों में बहुत बड़ा असर इस क्षेत्र के गाँवों का रहता है। बता दें कि केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह के निर्देश पर उत्तर प्रदेश के किसान आन्दोलन से प्रभावित क्षेत्रों में भाजपा नेता दौरे कर रहे हैं, ताकि

ख़ास चौधरियों से मुलाक़ात कर उन्हें किसानों के साथ जाने से रोका जा सके।

मौतों पर असंवेदनशीलता

यह बहुत विडंबना की बात है कि किसान आन्दोलन में हर हफ़्ते किसानों की मौत का आँकड़ा देश में हाल के साल में होने वाली किसानों की औसतन आत्महत्यायों के आँकड़े से भी ज़्यादा है। पिछले साल औसतन हर हफ़्ते पाँच किसानों ने आत्महत्या की थी। लेकिन दिल्ली की सीमाओं और पंजाब के कुछ हिस्सों में पिछले तीन महीनों में 26 नवंबर से 20 फरवरी के बीच प्रति सप्ताह औसतन 16 किसानों की जान चली गयी है। किसान नेता जगमोहन सिंह कहते हैं कि ये मौतें नहीं, शुद्ध हत्याएँ हैं; क्योंकि सरकार दिल्ली की सीमाओं पर पहुँचने वाले किसानों की समस्या हफ़्ते भर में हल कर सकती थी। लेकिन उसने अपने ही लोगों के प्रति उदासीनता दिखायी। किसान नेता राकेश टिकैत ने कहा कि कई किसानों को समय रहते चिकित्सा सहायता नहीं मिल पायी। हमारे साथी कठोर परिस्थितियों में ट्रैक्टर ट्रॉलियों में रह रहे हैं। परिस्थितियाँ अस्वाभाविक भी हैं; क्योंकि कोई भी आदमी सड़कों पर स्वच्छ शौचालय की माँग नहीं कर सकता है। इसी वजह से कई किसानों को अलग-अलग बीमारियाँ हुईं। इसके अलावा ठण्ड में दिल का दौरा, मस्तिष्क रक्तस्राव, मधुमेह और निमोनिया के कारण किसानों की मौत हो गयी। ज़्यादा ठण्ड के कारण बड़ी संख्या में किसानों को कार्डियक अरेस्ट (हृदयाघात) हुआ।पंजाब में तो कैप्टन सरकार ने आन्दोलन में जान गँवाने के लिए 5 लाख मुआवज़े की घोषणा की हुई है, लेकिन हरियाणा और उत्तर प्रदेश सरकारों ने ऐसी कोई मदद नहीं की है। किसान आन्दोलन के दौरान एक बहुत दुर्भाग्यपूर्ण घटना घटी जब कृषि क़ानूनों के ख़िलाफ़ जारी किसान आन्दोलन पर अपने विचार व्यक्त करने के बाद किरती किसान यूनियन के प्रदेश अध्यक्ष और संयुक्त किसान मोर्चा के सदस्य मास्टर दातार सिंह 'अलविदा, मेरा समय ख़त्म होता है।' कहकर कुर्सी पर ऐसे बैठे कि फिर उठ नहीं पाये। अस्पताल ले जाने पर डॉक्टरों ने उन्हें मृत घोषित कर दिया। वैसे संयुक्त किसान मोर्चा ने आन्दोलन के दौरान हुई किसानों की मौतों के आँकड़े 22 फरवरी को मीडिया को जारी किये। संयुक्त किसान मोर्चा के मुताबिक, नये कृषि क़ानूनों के ख़िलाफ़ आन्दोलन में कुल 248 किसानों की मौत 26 नवबंर, 2020 से लेकर 20 फरवरी, 2021 के बीच हुई। इन 248 किसानों में पंजाब के सबसे ज़्यादा 202 किसान, जबकि हरियाणा के 36, उत्तर प्रदेश के छः, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु और उत्तराखण्ड के एक-एक किसान की जान जा चुकी थी। मोर्चा के मुताबिक, ज़्यादातर मौतें दिल का दौरा पड़ने से ठण्ड लगने या फाँसी लगाने से हुई है। संगठन के मुताबिक, पंजाब में 2020 के पूरे साल में 261 किसानों ने आत्महत्या की थी।

पंजाब निकाय चुनाव में भाजपा साफ़

फरवरी के मध्य में हुए पंजाब के 109 नगर निकाय-नगर पंचायत और सात नगर निगम के चुनावों में जहाँ किसान आन्दोलन का समर्थन कर रही कांग्रेस की बल्ले-बल्ले हो गयी, वहीं ख़ुद को विकृप के रूप में खड़ा करने की कोशिश कर रही भाजपा को जबरदस्त मार पड़ी। कांग्रेस ने नगरपालिका वार्डों में ही बड़े स्तर पर जीत हासिल नहीं की, नगर निगमों पर भी क़ब्ज़ा कर लिया। अगले साल होने वाले विधानसभा चुनाव से पहले पंजाब में यह भाजपा ही नहीं अकाली दल और आम आदमी पार्टी के लिए भी बड़ा झटका है। नतीजों के बाद अकाली नेता और पूर्व केंद्रीय मंत्री सांसद हरसिमरत कौर ने हार के लिए अफ़सरों को ज़िम्मेदार ठहराया और उन्हें चेतावनी दी कि वे अपने उलटे दिन गिनने शुरू कर दें। जीत के बाद मुख्यमंत्री अमरिंदर सिंह ने कहा कांग्रेस सरकार के काम और किसानों की जीत को पार्टी के किसानों के प्रति चिन्ता ने ही जनता का वोट पार्टी को दिलाया। आने वाले दिनों में सुखबीर बादल के नेतृत्व वाले अकाली दल धड़े को एसजीपीसी चुनाव झेलने हैं। चुनावों में किसान बड़े मतदाता समूह हैं। सुखबीर को कराने के लिए सुखदेव सिंह ढींढसा ने एचएस फूलका, अकाल तख़्त के पूर्व जत्थेदार रंजीत सिंह और बादल ख़ेमे के असन्तुष्ट नेताओं से तालमेल किया है, जबकि उन्हें कांग्रेस, आप और भाजपा समर्थन भी हासिल है। इधर गुजरात के निकाय चुनावों में भाजपा ने बड़ी जीत हासिल की है, तो कांग्रेस दूसरे नंबर पर रही है। वहीं सूरत में आम आदमी पार्टी दूसरे नंबर की पार्टी बनकर उभरी है। तहलका

tehelkaletters@gmail.com

टूलकिट मामला

किसान आन्दोलन में 'टूलकिट' के मामले ने भी ख़ूब तूल पकड़ा है। दरअसल किसी काम की ख़ातिर कुछ सुझाव दिये जाएँ या तरीक़ा सुझाया जाए तो उसे टूलकिट कहा जाएगा। किसी आन्दोलन में इसका ऑनलाइन और ऑफलाइन इस्तेमाल करके समर्थकों को जुटाया जाता है। किसी आन्दोलन के लिए तैयार किये गये टूलकिट में विरोध को सही ठहराने के लिए कंटेंट, ख़बरों के लिंक दिये जाते हैं। वैसे टूलकिट कई साल से तैयार किये जाते रहे हैं। बेंगलूरु की पर्यावरण कार्यकर्ता दिशा रवि को 13 फरवरी को दिल्ली पुलिस ने गिरफ़्तार किया था। पुलिस का आरोप है कि दिशा रवि उन लोगों में शामिल हैं, जिन्होंने उस टूलकिट को तैयार किया था, जो स्वीडन की युवा पर्यावरण कार्यकर्ता ग्रेटा थनबर्ग ने साझा किया था। पुलिस इसे विदेशी साज़िश बता रही है, जबकि दिशा का कहना है कि उनका दिल्ली हिंसा, ख़ालिस्तान या सिख फॉर जस्टिस या पोएटिक जस्टिस फाउंडेशन से कोई कनेक्शन नहीं है। दिल्ली के पटियाला हाउस कोर्ट ने 22 फरवरी को दिशा को 5 दिन के रिमांड पर भेज दिया था। दिशा के साथ निकिता जैकब और शांतनु मुलुक को भी आरोपी बनाया; लेकिन पुलिस ने केवल दिशा रवि को ही गिरफ़्तार किया। हालाँकि 23 फरवरी को पटियाला कोर्ट ने उन्हें यह कहते हुए जमानत दे दी कि किसी लोकतांत्रिक देश में नागरिक राह दिखाने वाले होते हैं। सरकार की नीतियों से असहमत होने पर किसी को जेल नहीं भेजा जा सकता।

महापंचायतों की अन्धी सुरंग

महेंद्र सिंह राठौड़

महापंचायतों का दौर किसान आन्दोलन किस दिशा में ले जा रहा है। क्या इससे कोई समाधान निकलने वाला है? किसानों के बाद अब राजनीतिक दलों ने भी महापंचायतों का सिलसिला शुरू करने का फ़ैसला कर लिया है। कांग्रेस ने तो बाक़ायदा कार्यक्रम तय कर लिया है। हरियाणा में कई महापंचायतें राजनीति से अलग नहीं रहीं। उनमें बाक़ायदा तौर पर राज्य में भाजपा-जजपा सरकार को हर क़ीमत पर अस्थिर करने की घोषणा की गयी, जिसका लोगों ने हाथ उठाकर स्वागत किया। कहने को इनमें शामिल होने वाले किसान थे, जिन्हें किसी राजनीतिक दल से नहीं, बल्कि आन्दोलन की मुख्य दो माँगों से सरोकार था। कौन नहीं जानता कि ऐसी महापंचायतें कराने का असल मक़सद क्या था? किसी निर्वाचित सरकार को गिराने के आह्वान का आन्दोलन से जुड़ी माँगों से क्या मतलब है? आन्दोलन से केंद्र या कोई राज्य सरकार अस्थिर होती है, तो इसका नुक़सान देश को ही उठाना पड़ेगा। हरियाणा में तो सरकार गिरने का मतलब मध्यावधि चुनाव ही है। इसका लाभ आन्दोलन को नहीं, बल्कि पार्टी विशेष को हो सकता है।

हरियाणा में कांग्रेस आन्दोलन की आड़ में अपने को उभारने की कोशिश कर रही है। अब तो आन्दोलन से जुड़े नेताओं को राजनीतिक दलों से कोई परहेज़ भी नहीं रहा है। राजनीतिक पृष्ठभूमि के लोग चाहे आन्दोलन के मंच से लोगों को सम्बोधित नहीं करते। लेकिन प्रायोजन में उनकी अहम भागीदारी से इन्कार नहीं किया जा सकता। तो क्या आन्दोलन की दिशा और दशा पहले से अलग हो गयी है? बिल्कुल इससे इन्कार नहीं किया जा सकता। आन्दोलन में तीन महीने का समय कम नहीं होता, समस्या का समाधान निकल सकता है, लेकिन उसके लिए बातचीत के अलावा दूसरा कोई विकल्प नहीं है। किसान अब बातचीत की मेज से पहले पता नहीं केंद्र सरकार को क्या अपना स्वरूप दिखाना चाहते हैं।

26 जनवरी को लाल क़िले की घटना से पहले जो जोश किसानों में था, वैसा अब नहीं है। जब समाधान बातचीत से ही होना है, तो सरकार की पहल पर किसान नेता क्यों नहीं आगे आ रहे? वैसे पहल केंद्र सरकार ख़ुद भी कर सकती है और उसे देशहित में करनी भी चाहिए। अब बात पहल करने की है। कौन शुरुआत करे? जो करेगा वह पक्ष रक्षात्मक माना जाएगा। दोनों ही पक्ष बातचीत की पहल को प्रतिष्ठा का सवाल बना बैठे हैं।

तीन कृषि क़ानूनों को पूरी तरह रद्द कराने और न्यूनतम समर्थन मूल्य को क़ानूनी रूप करने के पक्ष में पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और राजस्थान आदि के किसान, जागरूक, संगठित, सजग और अडिग है, तो राष्ट्रीय स्तर पर यह दौर शुरू करने का औचित्य क्या है? किसान नेताओं को लगता है कि इससे आन्दोलन राष्ट्रीय स्तर तक मज़बूत होगा और केंद्र सरकार घुटनों पर आ जाएगी और उसे माँगें मानने पर मजबूर होना पड़ेगा। क़रीब 20 दिनों के इस अंतराल में महापंयाचतों को समर्थन ख़ूब मिला और मिल रहा है; लेकिन इससे हासिल क्या हुआ। आन्दोलन अब दिशा से भटकने लगा है।

कुछ लोगों का मानना है कि भाकियू के राष्ट्रीय प्रवक्ता और आन्दोलन की कमान सँभाल रहे राकेश टिकैत ख़ुद नहीं समझ पा रहे कि आख़िर आन्दोलन को वह जिस दिशा में ले जा रहे हैं? और वह कितना ठीक है? अक्टूबर तक आन्दोलन चलाने की उनकी घोषणा समझ से परे है। जब वह ख़ुद सार्वजनिक तौर पर कह चुके हैं कि समस्या का समाधान बातचीत से ही होगा, तो फिर आन्दोलन का इतना लम्बा अंतराल रखने या इसका ऐलान करने की ज़रूरत ही क्या थी। उन्हें तो सरकार से जल्द बातचीत करने का दवाब बनाना चाहिए, ताकि कुछ समाधान निकले। एक दर्ज़न दौर की बातचीत से किसान नेता केंद्र सरकार का रुख़ नहीं पहचान पाये। संसद में प्रधानमंत्री और कृषि मंत्री स्पष्ट कह चुके हैं कि कृषि क़ानूनों में संशोधन, डेढ़ साल के लिए इन्हें निरस्त रखने और न्यूनतम समर्थन मूल्य की गारंटी के लिए सरकार बातचीत के लिए तैयार है। लेकिन किसान नेता बिल्कुल राज़ी नहीं हैं; वे क़ानूनों को रद्द और देश भर में सभी कृषि उत्पादों पर न्यूनतम समर्थन मूल्य को क़ानूनी रूप देने पर अडिग हैं।

न्यूनतम समर्थन मूल्य को क़ानूनी रूप देने में कई तरह की अड़चनें आएँगी। सरकार गेहूँ, चावल और चना आदि की ख़रीद तो किसी तरह कर सकती है, बाक़ी उत्पाद वह किसी भी हालत में नहीं ख़रीद सकती। क़ानूनी रूप देने का मतलब यह होगा कि उससे कम की ख़रीद पर विक्रेता पर दण्डात्मक कार्रवाई होगी। कौन व्यापारी ख़तरा उठाना चाहेगा। कई उत्पाद आयात के बाद भी न्यूनतम समर्थन मूल्य से कम पर लाये जा सकते हैं। व्यापारी को अगर कम दाम पर वह मिलेगा, तो किसान से वह क्यों ख़रीदेगा। इससे किसान का उत्पाद बिक नहीं सकेगा। केंद्र सरकार पर जितना दबाव डाला जा सकता था, वह काम तो 26 जनवरी से पहले ही हो

चुका है। दबाव को उससे ज़्यादा और क्या बढ़ाया जा सकता है। इसी दबाव का नतीजा ही था कि केंद्र सरकार बातचीत के लिए मजबूर हुई। जब बातचीत चल रही थी और दो माँगों पर सहमति भी बन चुकी थी, तो गणतंत्र दिवस पर ट्रैक्टर परेड निकलाने की ज़रूरत ही क्या थी? जवान के साथ किसान की यह अनौखी परेड की योजना सही क़दम नहीं था। राकेश टिकैत तो अब आन्दोलन की मज़बूती के लिए देश भर के 40 लाख ट्रैक्टर जोड़ने की बात करते हैं। माँगें मनवाने के लिए टिकैत किसानों को हर तरह की क़ुर्बानी देने का आह्वान कर चुके हैं। नतीजा यह हुआ कि हरियाणा के करनाल और जींद ज़िलों में कुछ किसानों ने गेहूँ की तैयार हो रही फ़सल बर्बाद कर दी। हालाँकि उन्होंने बाद में अपना बयान भी दिया कि किसान ऐसा न करें। उनके कहने का मतलब कुछ दूसरा रहा हो, पर किसान उनकी बात पर सब कुछ करने को तैयार हैं। पंजाब के ज़िला होशियारपुर के गाँव महादीपुर में पिता-पुत्र ने सल्फास की गोलियाँ निगलकर ख़ुदकुशी कर ली। मौत की मुख्य वजह उन पर सहकारी समिति से तीन लाख रुपये का क़र्ज़ था, जो उनसे दिया नहीं जा रहा था। सुसाइड नोट में क़र्ज़ के अलावा दोनों ने कृषि क़ानूनों पर केंद्र सरकार के अड़ियल रुख़ और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की बेरुख़ी को ज़िम्मेदार बताया है। हरियाणा में भाकियू के प्रमुख किसान नेता गुरनाम सिंह चढ़ूनी ने किसानों से ऐसे आत्मघाती क़दम न उठाने का आह्वान किया है। उन्होंने किसानों से टिकैत के बयान को सकारात्मक रूप में लेने को कहा। इसके बाद टिकैत ने ख़ुद भी अपने कहे का अर्थ समझाने की कोशिश की है। महापंचायतों में टिकैत और अन्य किसान नेताओं का जिस गर्मजोशी से स्वागत हो रहा है, उसे देखते हुए लगता नहीं कि सिलसिला जल्द रुक जाएगा, पर इससे हासिल कुछ नहीं होगा। किसान एकता दिल्ली कूच के बाद मज़बूत ही रही है और कमोबेश अब भी है।

अब असल मुद्दा समस्या का समाधान है, जिसकी तरफ़ न केंद्र का ध्यान है और न ही आन्दोलन कर रहे नेताओं का। देश को आर्थिक

नुक़सान हो रहा है और मसला वहीं-का-वहीं अटका हुआ है। आन्दोलन को बहुत लम्बे समय तक चलाना आसान काम नहीं है। दोनों पक्षों के लिए यह स्थिति सुखद नहीं है। बातचीत के बाद सम्मानजनक समझौते की सम्भावना बनी हुई है। लेकिन इसके लिए पहल कौन करे? इसे लेकर ही रस्साकसी चल रही है। किसान नेता चाहते हैं कि सरकार ख़ुद पहल कर उन्हें बातचीत के लिए बुलाए, लेकिन उससे पहले उसे कृषि क़ानून रद्द करने और न्यूनतम समर्थन मूल्य को क़ानूनी रूप देने का मसौदा पेश करना होगा।

सवाल यह कि जब सरकार इस पर सहमत हो जाए, तो बिना बातचीत के ही आन्दोलन ख़त्म हो जाएगा। सरकार का रुख़ पहले जैसा ही है वह कृषि क़ानूनों के हर पहलू पर बातचीत और उपयुक्त संशोधन के लिए तैयार है। न्यूनतम समर्थन मूल्य पर गारंटी की बात वह कह चुकी है। रही बात क़ानूनी रूप देने की तो वह सम्भव नहीं जान पड़ता। जब केंद्र क़ानूनों को डेढ़ साल के लिए निरस्त करने को तैयार है, तो समय और ज़्यादा बढ़ाने पर बातचीत हो सकती है। भाकियू के राष्ट्रीय अध्यक्ष नरेश टिकैत निरस्त करने का समय और बढ़ाने के प्रस्ताव को बातचीत के लिए अच्छा क़दम बता चुके हैं।

2024 में लोकसभा चुनाव होने हैं। अगर तब तक केंद्र सरकार इन्हें निरस्त करने पर राज़ी हो जाए, तो एक तरह के क़ानून अप्रभावी ही हो जाएँगे। उसके बाद कोई भी सरकार इन्हें लागू करने से पहले कई बार सोचेगी। समाधान के रास्ते बहुत हैं, दोनों पक्षों के लिए सम्मानजनक समझौते की पृष्ठभूमि तैयार है पर राजनीतिक स्वार्थ इसमें आड़े आ रहे हैं। अब 27 फरवरी को एक बार फिर से किसानों को एकजुटता दिखाने का आह्वान किया गया है। ऐसे विशेष दिन बहुत-से आने वाले हैं। इससे किसानों की एकजुटता तो दिखेगी, पर समाधान का रास्ता नहीं निकलने वाला। जब बातचीत एक फोन कॉल की दूरी पर है, तो इतना समय क्यों लग रहा है? दोनों पक्षों को देशहित में हठधर्मिता छोड़कर बातचीत के लिए रास्ता निकालना चाहिए। तहलका

letters@tehelka.com

प्रतीक्षा करो और देखो

सरकार और किसान, दोनों पक्ष इस नीति पर चल रहे हैं। समाधान दोनों चाहते हैं; लेकिन पहल कोई नहीं करना चाहता। पहले बातचीत के दौर में पहल सरकार ने की थी, तो अब उसे क्या दिक़्क़त है? क्यों नहीं प्रधानमंत्री ही पहल कर देते? संयुक्त किसान संघर्ष समिति सदस्य सीधे नरेंद्र मोदी से बातचीत करना चाहते हैं। कई नेता ऐसे बयान दे भी चुके हैं। वह बातचीत कर भी सकते हैं। सवाल यह कि अगर किसान अपने रुख पर क़ायम रहे और बातचीत नाकाम रही, तो फिर क्या होगा? उसके बाद तो कोई विकल्प बचता ही नहीं है। किसान नेता बिना शर्त बात करने के इच्छुक नहीं, जबकि प्रधानमंत्री सशर्त बात करने को तैयार नहीं होंगे।

रक्तदान के महाशिविर की तैयारी

शहीदी दिवस पर 1500 शिविरों से 'निफा' बनाएगी रक्तदान का विश्व रिकॉर्ड

तहलका ब्यूरो

नेशनल इंटेलीग्रेटेड फोरम ऑफ आर्टिस्ट एंड एक्टिविस्ट्स (निफा) शहीद भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव के 90वें शहीदी दिवस पर 23 मार्च को संवेदना कार्यक्रम के तहत देश भर में 90 हज़ार यूनिट रक्त जुटाएगी। इसका लक्ष्य ब्लड बैंकों में ख़ून की कमी को पूरा करना तो है ही, गिनीज बुक में नाम दर्ज करवाना भी है। इसके लिए देश भर में एक ही दिन में 1500 रक्तदान शिविर लगाये जाएँगे। रक्तदान शिविर का सबसे दिलचस्प पहलू यह है कि हिमाचल के क़बाइली ज़िले लाहुल स्पीति में भी रक्तदान शिविर लगेगा, जो बर्फ़बारी के बीच अब तक का पहला रक्तदान शिविर होगा। हैरत यह है कि लाहुल स्पीति में सरकारी अस्पताल तो हैं, लेकिन पूरे ज़िले में एक भी ब्लड बैंक नहीं है।

निफा अब तक राष्ट्रीय स्तर पर 700 रक्तदान शिविर लगा चुका है। उसका मक़सद 1500 शिविर पूरे करना है। निफा संवेदना नाम से रक्तदान परियोजना चला रहा है और अब तक यह 26 राज्यों में शिविर आयोजित कर चुका है। निफा के राष्ट्रीय अध्यक्ष प्रीतपाल सिंह पन्नू बताते हैं कि संस्था का नाम 6 बार गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड में दर्ज हो चुका है। उन्होंने इस संवाददाता से बातचीत में कहा कि रक्तदान शिविर समाज में ज़रूरतमंदों को नया जीवन की आकांक्षा के साथ आयोजित करते हैं। हमारे 23 मार्च के शिविर में जो वालंटियर्स रक्तदान करेंगे, उन्हें किसी जानी-मानी हस्ती के हस्ताक्षर किये हुए सर्टिफिकेट, गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स दफ़्तर से प्रमाणित सर्टिफिकेट और अन्य सर्टिफिकेट देकर सम्मानित किया जाएगा।

संस्था एक मोबाइल ऐप भी जारी करेगी जिसमें रक्तदान करने वाले की पूरी जानकारी होगी। इसकी मदद से ज़रूरतमंद लोगों को ब्लड रूप आसानी से मिल सकेंगे। संस्था से कैलाश खेर, अभिनेता सोनू सूद, रणदीप हुड्डा,

अशोक हाँडे, भारतीय क्रिकेट टीम के पूर्व कप्तान महेंद्र सिंह धोनी, करण राजदान जैसी हस्तियाँ जुड़ी हुई हैं। ब्रह्मकुमारी, राष्ट्रीय रक्त संचरण परिषद्, इंडियन रेडक्रॉस सोसायटी और अन्य सामाजिक संगठन इस देशव्यापी शिविर में सहयोग कर रहे हैं। राष्ट्रव्यापी अभियान में एक ही दिन 1500 रक्तदान शिविर लगाये जाएँगे।

निफा के राष्ट्रीय अध्यक्ष प्रीतपाल सिंह पन्नू ने तहलका से बातचीत में कहा कि भारत में हर साल ज़रूरत से 20 लाख यूनिट रक्त कम इकट्ठा होता है। देश में 1.40 करोड़ यूनिट ख़ून की ज़रूरत होती है; लेकिन हम 1.20 यूनिट ही जुटा पाते हैं।

करोना वायरस के संकट के बाद तो यह कमी और ज़्यादा हो गयी है। क्योंकि आपसी दूरी, कोरोना वायरस के भय, शैक्षणिक संस्थाओं के बन्द रहने आदि के कारण कई महीने तो रक्तदान हुआ ही नहीं। हमें रक्तदान को प्रोत्साहित करने के लिए स्ट्रेटेजी बदलने की ज़रूरत है और इसे स्कूल और कॉलेज स्तर पर ले जाने की ज़रूरत है और यही भी जागरूकता लाने की ज़रूरत है कि रक्तदान के स्वास्थ्य

सम्बन्धी ढेर सारे फ़ायदे भी हैं। जनता, ख़ासकर युवाओं से मेरा आग्रह है कि बड़ी संख्या में 23 मार्च को रक्तदान करें।

हिमाचल का लाहुल स्पीति देश का एक जैसा ज़िला है, जहाँ कोई ब्लड बैंक नहीं है। लेकिन निफा की प्रदेश प्रमुख सारिका कटोच ने 'तहलका' को बताया कि 23 मार्च को स्पीति या लाहुल में से किसी एक जगह शिविर लगाने की उनकी तैयारी है। उन्होंने बताया कि इस क़बाइली

“ हिमाचल के शीत मरुस्थल के नाम से मशहूर स्पीति में रक्तदान शिविर एक अनोखा अनुभव होगा। स्पीति घाटी दुनिया के सबसे ऊँचे ठिकानों में शामिल है। दुनिया का सबसे ऊँचाई पर स्थित डाकघर और गाँव हिक्किम स्पीति में ही हैं। ऐसी जगह में रक्तदान शिविर देश भर के लोगों को प्रेरणा देगा, जहाँ इन दिनों जबरदस्त ठण्ड होती है। इसके अलावा पिओ (किन्नौर) और भावनगर जैसे दुर्गम इलाक़ों में भी संस्था 23 मार्च को रक्तदान शिविर लगा रही है।

सारिका कटोच
अध्यक्ष निफा, हिमाचल प्रदेश

रक्तदान के फ़ायदे और यह ज़रूरी क्यों

एक व्यक्ति से रक्त या रक्त के घटकों को लेकर दूसरे व्यक्ति में स्थानांतरण करना ब्लड ट्रांसफ्यूजन (रक्ताधान) कहलाता है। रक्ताधान शरीर में रक्त की आपूर्ति करने के लिए किया जाता है। रक्ताधान की ज़रूरत अक्सर शरीर में रक्त की कमी होने पर पड़ती है। एक सुई या पतली ट्यूब के ज़रिये ज़रूरतमंद की एक नस में रक्त चढ़ाया जाता है। बहुत-से लोगों यह जानकारी नहीं होगी कि रक्तदान के फ़ायदे भी बहुत हैं। चिकित्सकों के मुताबिक, रक्तदान से हृदयाघात की आशंका कम होती है। क्योंकि रक्तदान से ख़ून का थक्का नहीं जमता और ख़ून कुछ मात्रा में पतला हो जाता है, जिसे दिल के लिए अच्छा माना जाता है। रक्तदान से वज़न कम करने में भी मदद मिलती है। विशेषज्ञ सुझाव देते हैं कि किसी भी स्वस्थ व्यक्ति को साल में दो बार रक्तदान करना चाहिए। इसके अलावा रक्तदान करने से शरीर में कैलोरी की मात्रा घटती है और लिवर से जुड़ी समस्याएँ कम हो सकती हैं। क्योंकि शरीर में ज़्यादा आयरन की मात्रा संतुलित होती है, जिससे लिवर पर दबाव नहीं पड़ता। कुछ विशेषज्ञ यह भी कहते हैं कि आयरन की मात्रा को संतुलित करने से लिवर स्वस्थ होता है और यह चीज़ कैंसर का ख़तरा कम कर सकती है। दुनिया भर में रक्त की बहुत बड़े पैमाने पर ज़रूरत महसूस की जाती है। कई लोगों को इलाज के दौरान सुरक्षित रक्त की ज़रूरत पड़ती है। रक्तदान को जीवन बचाने वाली चिकत्सीय ज़रूरतों में से एक माना जाता है। इसके अलावा कई आपात स्थितियों- प्राकृतिक आपदा, दुर्घटना, सशस्त्र संघर्ष आदि में घायलों को भी इलाज के लिए रक्त की ज़रूरत रहती है। मातृ और नवजात देखभाल में रक्तदान जीवन रक्षक की भूमिका निभाता है। पिछले साल (2020) में रक्तदान दिवस की थीम 'सुरक्षित रक्त, बचाये जीवन' रखी गयी थी; जबकि नारा 'रक्त दें और दुनिया को एक सेहतमंद जगह बनाएँ' था। कोई भी स्वस्थ व्यक्ति 18 साल की उम्र के बाद 45 से 50 किलोग्राम से ज़्यादा वज़न होने पर रक्तदान कर सकता है। रक्तदाता को एचआईवी, हेपेटाइटिस बी या सी जैसे रोगों से मुक्त होना ज़रूरी है। क्योंकि इन रोगों के वायरस ख़ून से ही दूसरे व्यक्ति के शरीर में प्रवेश करते हैं। इसलिए सुरक्षित रक्तदान पर बहुत ज़ोर दिया गया है। रक्तदान ख़ाली पेट नहीं किया जा सकता और उससे पहले कुछ ज़रूर खा लेना चाहिए।

कैसे हुई रक्तदान की शुरुआत

रक्तदान को महादान कहा गया है। क्योंकि इससे बहुत-से लोगों की जान बचायी जा सकती है। दुनिया भर में 14 जून को विश्व रक्तदान दिवस (वर्ल्ड ब्लड डोनर-डे) मनाया जाता है, जिसका उद्देश्य रक्तदान को प्रोत्साहित करना है। दुनिया में पहली बार सन् 2004 में विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) ने विश्व रक्तदान दिवस की शुरुआत की थी। बता दें 14 जून को नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक कार्ल लैंडस्टेनर का जन्म हुआ था, जिन्होंने एबीओ ब्लड ग्रुप सिस्टम खोजा था। लैंडस्टीनर के ब्लड ग्रुप की खोज करने से पहले तक ब्लड ट्रांसफ्यूजन के रूप की जानकारी नहीं होती थी। याद रहे लैंडस्टाइन को सन् 1930 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। बिना धन लिए स्वैच्छिक रक्तदान करने वालों का आभार जताने के लिए इस दिवस को मनाया जाता है।

ज़िले में बर्फ़बारी के बीच यह अब तक का पहला रक्तदान शिविर होगा; लिहाज़ा हम बहुत उत्साहित हैं। कटोच के मुताबिक, पूरे प्रदेश में 27 जगह रक्तदान शिविर लगेंगे और इसमें उन्हें यूथ क्लब और सरकार का भी पूरा सहयोग मिल रहा है।

सारिका के मुताबिक, इस आयोजन में अंतर्राष्ट्रीय शख़्सियत को भी बुलाने की कोशिश कर रहे हैं, ताकि युवाओं को प्रेरित किया जा सके। संस्था के प्रदेश संयोजक तरुण धीमान ने बताया कि यह भी पहला मौक़ा होगा, जब प्रदेश के सभी 12 ज़िलों में एक साथ रक्तदान शिविर लगेंगे। तरुण प्रदेश में शिविर की तैयारी का ज़िम्मा सँभाले हुए हैं।

'तहलका' की जुटायी जानकारी बताती है कि सितंबर, 2020 के सरकारी रिकॉर्ड के मुताबिक, देश के 63 ज़िलों में एक भी ब्लड बैंक नहीं है। बिना ब्लड बैंक वाले 63 ज़िलों में अरुणाचल प्रदेश में 14, असम और बिहार में 5-5 ज़िले, मणिपुर में 12 ज़िले, मेघालय में सात और नागालैंड के नौ ज़िले शामिल हैं। इसी फरवरी में संसद के बजट सत्र के दौरान राज्यसभा में स्वास्थ्य और परिवार कल्याण राज्य मंत्री अश्विनी चौबे ने बताया था कि सार्वजनिक स्वास्थ्य, राज्य का विषय है और राज्य सरकारों की प्राथमिक ज़िम्मेदारी है कि वे अपनी आवश्यकता के अनुसार ब्लड बैंकों की स्थापना सुनिश्चित करें।

चौबे के मुताबिक, राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के तहत राज्यों के प्रस्तावों के आधार पर नये ब्लड बैंक स्थापित करने के लिए केंद्र से सहायता प्रदान की जाती है। नेशनल ब्लड ट्रांसफ्यूजन काउंसिल, एमओएचएफडब्ल्यू ने ब्लड बैंक नीति तैयार की है, जिसके अनुसार हर ज़िले में कम-से-कम एक ब्लड बैंक होना चाहिए।

ब्लड बैंक स्थापित करने के लिए आवश्यक बुनियादी ढाँचे को ड्रग्स एंड कॉस्मेटिक्स एक्ट, 1940 और नियमों के तहत रखा गया है; जिसके तहत ब्लड बैंक चलाने के लिए लाइसेंस प्राप्त करना अनिवार्य है। देश में लाइसेंस प्राप्त ब्लड बैंकों की संख्या 3,321 है। तहलका

tehelkaletters@gmail.com

अध्यक्ष की तलाश में कांग्रेस

कांग्रेस में नये अध्यक्ष और अन्य पदों के चुनावों की घोषणा के बाद हलचल तेज़ हो गयी है। जून तक नया पार्टी अध्यक्ष चुने जाने की तैयारी है। पार्टी में तेज़ हुई हलचल बताती है कि हाल के वर्षों में कांग्रेस के भीतर जैसी स्थिति सोनिया गाँधी बनाम राहुल गाँधी की रही है, वैसी ही अब राहुल गाँधी बनाम प्रियंका गाँधी की बन रही है। अन्तर सिर्फ़ इतना है कि इन दोनों के समर्थक एक ही हैं। यह सोनिया गाँधी बनाम राहुल गाँधी की तरह युवा बनाम वरिष्ठ की लड़ाई नहीं है। नयी कांग्रेस समिति में वरिष्ठों और युवाओं का समान प्रतिनिधित्व तय करने की तैयारी की जा रही है। राहुल अध्यक्ष बने, तो प्रियंका गाँधी नंबर-2 पर होंगी और उनकी भूमिका संगठन के नेताओं के बीच तालमेल बैठाने, योजनाएँ बनाने और संकटमोचक की होगी; जैसी अहमद पटेल की थी। गाँधी परिवार से बाहर का अध्यक्ष चुनने को पार्टी नेता तैयार नहीं हैं। यदि फिर भी ऐसा अवसर आया, तो कोई बहुत आश्चर्यजनक नाम सामने आ सकता है। पाँच विधानसभा चुनावों के नतीजे अच्छे रहे, तो कांग्रेस निश्चित ही ज़्यादा आक्रामक रूप में दिखेगी। फ़िलहाल की गतिविधियों और भविष्य की योजनाओं पर विशेष संवाददाता **राकेश रॉकी की रिपोर्ट :-**

पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गाँधी के निकट सहयोगी कैप्टन सतीश शर्मा के अन्तिम संस्कार के समय नंगे पाँव राहुल गाँधी और उनकी बहन पार्टी महासचिव प्रियंका गाँधी की बेहद ग़मगीन मुद्रा सिर्फ़ एक पारिवारिक मित्र को खो देने का ग़म भर नहीं था। पिछले दिनों में गाँधी परिवार ने अहमद पटेल और मोती लाल वोरा जैसे अपने विश्वस्त सहयोगी और संकटमोचक भी खो दिये हैं। भले कुछ साल से सतीश राजनीति में सक्रिय नहीं थे, वह इंदिरा गाँधी और राजीव के समय से सोनिया गाँधी और परिवार की एक अहम कड़ी थे। इतने अहम नेताओं को खो देने के बाद कांग्रेस अध्यक्ष के जून में प्रस्तावित चुनाव से पहले पार्टी के बीच नये अध्यक्ष ही नहीं, बल्कि एक भरोसेमंद सलाहकार का पद भरने पर भी चिन्तन शुरू हो गया है। पार्टी अगले लोकसभा चुनाव से पहले संगठन को सूरत देने और पूरी ताक़त से मैदान में जुट जाने के लिए कमर कस चुकी है।

'तहलका' की जानकारी के मुताबिक, कांग्रेस में वर्तमान सोनिया-राहुल टीम की जगह राहुल-प्रियंका की जोड़ी को कांग्रेस को नया तेवर देने का ज़िम्मा सौंपने की कमोवेश पूरी तैयारी कर ली गयी है।

कांग्रेस के भीतर अध्यक्ष पद को लेकर कोई बड़ा विभाजन नहीं है। ज़्यादातर पार्टी नेता गाँधी परिवार से बाहर का अध्यक्ष नहीं चाहते। हाँ, राहुल गाँधी और प्रियंका गाँधी का अपना-अपना समर्थक वर्ग ज़रूर है, जो दोनों की तुलना कर रहा है। नेताओं में भी काफ़ी ऐसे हैं, जो कह रहे हैं कि राहुल इन्कार करते हैं, तो प्रियंका गाँधी को अध्यक्ष बना देना चाहिए। पार्टी नया अध्यक्ष देश में पाँच विधानसभाओं के लिए होने वाले चुनाव के नतीजों के बाद चुनेगी और कांग्रेस के लिए नतीजे बेहतर रहे, तो पार्टी में माहौल ख़ुशगवार हो सकता है और नया अध्यक्ष चुनने का उसका मज़ा दोगुना हो सकता है। इसके विपरीत हार पार्टी की बेचैनी बढ़ा सकती है। वैसे इसमें कोई दो राय नहीं कि जिन राज्यों में चुनाव हो रहे हैं, उनमें से बंगाल को छोड़कर बाक़ी जगह कांग्रेस अपने प्रतिद्वंद्वियों को टक्कर देने की स्थिति में है।

पार्टी के महासचिव तारिक अनवर ने 'तहलका' से बातचीत में कहा कि केरल, पुडुचेरी और असम में हम अपनी और तमिलनाडु में सहयोगी डीएमके के साथ गठबन्धन सरकार बनने की उम्मीद कर रहे

राहुल का क़द

कांग्रेस कार्य समिति की जनवरी की बैठक के बाद जबसे कांग्रेस अध्यक्ष का चुनाव जून में होने की घोषणा की गयी है, पार्टी के भीतर राहुल गाँधी की भूमिका को लेकर कयास लगने लगे हैं। कुछ महीने पहले एक चिट्ठी से पार्टी के बीच हलचल पैदा करने वाले नेताओं ने नाराज़गी वाले तेवर तो दिखाये; लेकिन संसद के भीतर जब भी बात आयी पार्टी का पक्ष मज़बूती से रखा और मोदी सरकार को घेरने में कोई क़सर नहीं छोड़ी। ऐसे में यह तो नहीं माना जा सकता कि यह नेता बग़ावत करके सत्ता पक्ष में जा सकते हैं। देखा जाए तो कांग्रेस की अंतरिम अध्यक्ष तो सोनिया गाँधी हैं और राहुल गाँधी सिर्फ़ एक पार्टी सांसद। लेकिन इसके बावजूद तमाम बड़े मुद्दों पर वही पार्टी की तरफ़ से सबसे बड़ी आवाज़ वही हैं, जिससे उनके बड़े क़द का अंदाज़ा साफ़ लगता है। राहुल ने ही हाल में पत्रकार वार्ता करते हुए पार्टी का पक्ष मज़बूती से रखा है। जनता भी राहुल को ही कांग्रेस का अध्यक्ष की हैसियत वाला नेता मानती है। ऐसे में उनके अध्यक्ष होने और नहीं होने के बीच बस एक महीन-सी रेखा ही है; औपचारिक अध्यक्ष होने की। पार्टी के बड़े कर्ताधर्ताओं की बात मानें, तो राहुल गाँधी ही अध्यक्ष बनेंगे और प्रियंका गाँधी की स्थिति नंबर-2 पर होंगी। इसमें कोई शक नहीं है कि राहुल गाँधी एकमात्र राष्ट्रीय नेता हैं, जो लगातार प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के ख़िलाफ़ तथ्यों के साथ जनता के बीच जा रहे हैं। हाल के दिनों में किसान आन्दोलन में भी वह उभरे हैं।

हैं। बंगाल में भी हम वामपंथी दल के साथ जा रहे हैं और अच्छी सीटें जीतेंगे। किसानों, युवाओं, महिलाओं, अल्पसंख्यकों के अलावा मध्यम वर्ग के साथ भाजपा और मोदी सरकार ने जो किया है, उसने उसकी स्थिति को अब बहुत कमज़ोर कर दिया है। कांग्रेस देश में मज़बूत वापसी करेगी।

अहमद पटेल और मोतीलाल वोरा की जगह कौन लेगा? इसकी पार्टी में उतनी ही चर्चा है, जितनी अध्यक्ष पद को लेकर। कमलनाथ से लेकर अशोक गहलोत के नाम सामने हैं। चार दशक से गाँधी परिवार के बहुत भरोसेमंद रहे गुलाम नबी आज़ाद पिछले दिनों में अचानक परिदृश्य की धुंध में खोये दिखे हैं और अब उनका राज्य सभा का कार्यकाल भी ख़त्म हो गया है। इसके बावजूद यह नहीं कहा जा सकता है कि उनकी राजनीतिक पारी समाप्त हो गयी। कुछ तल्ख़ी के बावजूद गाँधी परिवार में उनके लिए अभी ही सॉफ्ट कॉर्नर है। सम्भावना है कि आने वाले महीनों में उन्हें राज्यसभा में वापस लाया जाएगा और अध्यक्ष के चुनाव के बाद संगठन में ज़िम्मेदारी दी जाएगी।

ऐसे में सवाल यह है कि यदि राहुल गाँधी अध्यक्ष बनते हैं, तो पार्टी में नंबर-2 कौन होगा? यानी संकट मोचक और संवाद की भूमिका में कौन होगा? पार्टी के नेताओं से बातचीत पर 'तहलका' को लगता है कि महासचिव प्रियंका गाँधी को यह भूमिका देने के लिए पार्टी में कमोवेश सहमति है। प्रियंका अध्यक्ष (राहुल गाँधी) और पार्टी के बीच पुल की भूमिका निभाएँगी, समय-समय पर पैदा होने वाले संकटों पर रणनीति बुनेंगी और संवाद का काम करेंगी। प्रियंका उत्तर प्रदेश की प्रभारी महासचिव के नाते भले मुख्यमंत्री पद की दावेदार मानी जा रही हों, लेकिन जानकार मानते हैं कि अगले चुनाव में निश्चित ही प्रियंका उत्तर प्रदेश के किसी नेता, जिनमें प्रदेश अध्यक्ष ओबीसी नेता और दो बार के विधायक अजय कुमार लल्लू का नाम सबसे ऊपर माना जा रहा है; को इस पद के लिए आगे करेंगी। उन्होंने अपने मेहनत से पार्टी के बीच एक ख़ास जगह बना ली है।

लल्लू उत्तर प्रदेश में कांग्रेस के वह नेता हैं, जो किसी भी अध्यक्ष की तुलना में शासन की तरफ़ से सबसे ज़्यादा बार जेल में डाले गये हैं। इससे उनकी छवि एक जुझारू नेता की बनी है। प्रियंका उन्हें पूरी ताक़त से आगे करती दिख रही हैं। प्रियंका ऐसा करके एक और सन्देश देना चाहती हैं। वह यह कि देश में स्थानीय नेता आगे आयें और संगठन के लिए मज़बूती से काम करें। सत्ता में आने पर उन्हें इसका पुरस्कार मिलेगा।

प्रियंका उत्तर प्रदेश में कांग्रेस की जड़ें जमाने की कोशिश कर रही हैं। किसान आन्दोलन से जुड़ी महापंचायतों में शिरकत करके उन्होंने भाजपा ख़ेमे में भी खलबली मचा दी है। सच कहा जाए, तो उत्तर प्रदेश में विपक्षी दलों में यदि कोई सबसे ज़्यादा सक्रिय है, तो वह प्रियंका गाँधी हैं। किसानों का समर्थन कांग्रेस की तरफ़ होता दिख भी रहा है। ऐसे बहुत-से नेता हैं, जो यह मानते हैं कि उत्तर प्रदेश में यदि कोई नेता मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के लिए अगले विधानसभा चुनाव में संकट पैदा कर सकता है, तो वह प्रियंका गाँधी हैं; जिनमें सूबे के सभी वर्गों को कांग्रेस के साथ ला सकने की क्षमता है। उत्तर प्रदेश में कांग्रेस को खड़ा कर सकने में सफलता का मतलब होगा, प्रियंका गाँधी का कांग्रेस में सिक्का जम जाना।

कांग्रेस की तैयारियों को नज़दीक से देख रहे कांग्रेस के एक वरिष्ठ नेता ने तहलका को बताया कि अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के चुनावों की प्रक्रिया जून से अगस्त के बीच पूरी हो जाएगी। फ़िलहाल सोनिया गाँधी अंतरिम अध्यक्ष के नाते पार्टी का ज़िम्मा देख रही हैं। राहुल अध्यक्ष बनते हैं, तो वह पार्टी के 88वें अध्यक्ष होंगे। यह कार्यकाल अगले साल के आख़िरी महीने तक के लिए होगा। पार्टी संविधान के अनुसार नियमित अध्यक्ष का निर्वाचन निर्वाचक मण्डल करता है, जिसमें 1250 से कुछ ज़्यादा सदस्य हैं।

राहुल गाँधी की हाँ, न!

राहुल गाँधी ने अध्यक्ष पद को लेकर जैसा रुख़ दिखाया है, उससे हाल के महीनों में कांग्रेस के भीतर अनिश्चितता पैदा हुई है। बड़े नेता भी नहीं जानते कि आख़िर में राहुल गाँधी का क्या फ़ैसला होगा? अब भले चुनाव का समय तय हो गया है, और पार्टी का वृहद् वर्ग चाहता है कि राहुल यह ज़िम्मा सँभालें। लेकिन ख़ुद राहुल की तरफ़ से ऐसे बयान आ जाते हैं, जिससे कार्यकर्ताओं और नेताओं में असमंजस की स्थिति बन जाती है। हाल के हफ़्तों में राज्यों कांग्रेस इकाइयों ने ऐसे प्रस्ताव पास कर दिल्ली भेजे हैं, जिनमें राहुल गाँधी को अध्यक्ष बनाने की पुरज़ोर माँग की गयी है। चुनाव तक कमोवेश सभी राज्य इकाइयाँ ऐसे प्रस्ताव भेज चुकी होंगी, जिसके बाद राहुल गाँधी के सामने दबाव की स्थिति होगी। कांग्रेस के लिए सबसे बेहतर स्थिति यह होगी कि वह अध्यक्ष पद के लिए खुला चुनाव करवाए, ताकि उसके विपक्षियों, ख़ासकर भाजपा के पास यह कहने का कारण न रहे कि पार्टी

हाल में पार्टी नेतृत्व को लेकर सवाल उठाने वाले नेताओं (जी-23) की मीडिया में ख़ूब चर्चा रही है। इसका उन्हें नुक़सान भी उठाना पड़ा है। गुलाम नबी आज़ाद फ़िलहाल राज्यसभा से बाहर हो गये हैं। वहीं उप नेता आनंद शर्मा, जो आज़ाद की जगह राज्य सभा में नेता बनने की उम्मीद कर रहे थे; की जगह वरिष्ठ नेता मल्लिकार्जुन खड़गे को यह ज़िम्मा सौंपा गया है। शर्मा उप नेता ज़रूर बने रहे हैं। ख़ुद आनंद शर्मा का कार्यकाल अगले साल अप्रैल में ख़त्म हो जाएगा। उनका दोबारा राज्य सभा में आना नये अध्यक्ष से उनके तालमेल पर निर्भर करेगा। क्योंकि निश्चित ही नये अध्यक्ष के साथ वर्तमान टीम भी बदलेगी। एक और नेता, जिन्होंने हाल में नेतृत्व को लेकर बातें की हैं; वह कपिल सिब्बल हैं।

असन्तुष्ट किनारे

यह तय है कि नया अध्यक्ष चुने जाने के बाद कांग्रेस के भीतर नये समीकरण बनेंगे। बहुत-से राजनीतिक जानकार यह मानते हैं कि आज़ाद और शर्मा जैसे वरिष्ठ नेता स्थायी अध्यक्ष के चुनाव के बाद ख़ुद ही चुप हो जाएँगे। ये वे नेता हैं, जो अतीत में नेतृत्व के साथ ताक़त के साथ खड़े रहे हैं। और नेतृत्व के कारण ही उनकी राजनीति भी चलती रही है और नेतृत्व के कारण ही राज्य सभा में उन्हें सीट मिलती रही है। पार्टी के वरिष्ठ नेताओं का मानना है कि नया अध्यक्ष बनने के बाद पार्टी के बीच की जंग और तनाव भी ख़त्म हो जाएँगे। लेकिन बड़ा सवाल अध्यक्ष बनने से पहले की स्थिति का है। क्या पार्टी के नेता अध्यक्ष पद को लेकर कोई पेच फँसाएँगे? पार्टी के एक वरिष्ठ नेता ने नाम न छापने की शर्त पर 'तहलका' को बताया कि इसकी सम्भावना कम ही है। सभी जानते हैं कि नेतृत्व के लिए उनमें से कोई भी राष्ट्रव्यापी छवि नहीं रखता। गाँधी परिवार से बाहर कोई नहीं जाना चाहता। लेकिन एक और नेता का कहना है कि कुछ नेताओं की तरफ़ से बग़ावत से इन्कार नहीं किया जा सकता। उन्होंने कहा कि जिस तरह कुछ नेताओं ने अपनी नाराज़गी सार्वजनिक की है, वह फिर मुखर हो सकते हैं। लेकिन यह भी सच है कि ऐसा वे अपनी राजनीति की क़ीमत और निजी जोखिम पर ही करेंगे।

राज्यसभा में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने जिस तरह भावुक होकर गुलाम नबी आज़ाद की प्रशंसा की,

राहुल ही पार्टी की सबसे बड़ी पसन्द हैं और यदि किसी कारणवश नहीं हुआ, तो प्रियंका गाँधी। नेता मानते हैं कि पार्टी को गति देने के लिए फिर प्रियंका सबसे बेहतर विकल्प होंगी। यदि गाँधी परिवार से बाहर की बात आयी, तो अशोक गहलोत पहली पसन्द होंगे। बहुत-से नेता मानते हैं कि गुलाम नबी आज़ाद भी एक विकल्प होते, यदि हाल की लेटर बम जैसी घटना नहीं होती तो !

ने अध्यक्ष चुना नहीं, मनोनीत किया है। इससे पार्टी के भीतर उन नेताओं को बोलने का मौक़ा नहीं मिलेगा, जो अध्यक्ष पद के लिए चुनाव के वकालत कर रहे हैं। यह सही माँग भी है। कांग्रेस के भीतर ऐसा लोकतंत्र दिखाना, पार्टी को लेकर जनता में अच्छा सन्देश ही देगा। कुछ नेता मानते हैं कि राहुल इस बात ज़ोर देते रहे हैं कि गाँधी परिवार से बाहर का नेता अध्यक्ष बना दिया जाए। लेकिन इस उधेड़बुन में कांग्रेस का ही नुक़सान हुआ है। भाजपा कांग्रेस पर यही आरोप लगाती रही है कि वह एक परिवार की ही पार्टी है। ज़ाहिर है, उसका निशाना गाँधी परिवार पर ही होता है। लेकिन सच यह भी है कि भाजपा भी जानती है

उससे तो एक बारगी लगा कि आज़ाद को पटाने की कोशिश हो रही है। मोदी की भाषा भी बहुत नपी तुली थी और उनके भाषण में साफ़ तौर पर दिखा कि वह आज़ाद और कांग्रेस के बीच एक रेखा खींच रहे हैं। मोदी ने मुक्तकण्ठ से आज़ाद के मुख्यमंत्री रहते एक आतंकी घटना के दौरान उनकी मानवीय संवेदना और प्रशासनिक कौशल की जमकर तारीफ़ की। इससे लगा कि कहीं मोदी जम्मू-कश्मीर में भाजपा की राजनीति की पटकथा में आज़ाद को भाजपा के भविष्य के नायक के रूप में तो चित्रित नहीं कर रहे! लेकिन इसके बाद आज़ाद के एक इंटरव्यू ने इस सम्भावना पर पानी फेर दिया; जब उन्होंने साफ़ कहा कि कश्मीर में काली बर्फ़ गिरने की सूरत में ही वह भाजपा में जा सकते हैं।

भाजपा के प्रति आज़ाद के इस तंज़ को समझा जा सकता है। क्योंकि भले कुछ कहा जाए, आज़ाद बेहिचक एक खांटी कांग्रेसी रहे हैं। लेकिन सच यह भी है 20 फरवरी को मोदी सरकार के अल्पसंख्यक मंत्रालय के एक कार्यक्रम में शरीक़ होकर आज़ाद ने उनके भाजपा में जाने के कयासों को हवा दी है। मोदी सरकार के किसी मंत्रालय के कार्यक्रम में आज़ाद जैसे खांटी कांग्रेसी का जाना अपने आपमें बड़ी बात है। यही नहीं, इस कार्यक्रम में आज़ाद के बहुत पोस्टर तक लगे हुए थे। कार्यक्रम में मुख़्तार अब्बास नक़वी और जितेंद्र सिंह जैसे मंत्रियों ने जिस तरह आज़ाद का स्वागत किया, उससे ऐसा लगता था मानो आज़ाद कांग्रेस के नहीं, भाजपा के नेता हैं।

कि गाँधी परिवार के ही कारण कांग्रेस एकजुट है और जनता के बीच जैसी पकड़ गाँधी परिवार की है, वैसी किसी और नेता की नहीं हो सकती है। दूसरे ख़ुद भाजपा में बड़े पैमाने पर स्थापित नेताओं के परिजन पार्टी में हैं। चुनावों के समय टिकट की लड़ाई भाजपा में भी नेता अपने बच्चों या रिश्तेदारों के लिए लड़ते हैं। देखा जाए, तो आज की तारीख़ में कांग्रेस के मुक़ाबले भाजपा में नेताओं के ज़्यादा रिश्तेदार पार्टी में हैं।

हिमाचल प्रदेश विधानसभा में विपक्ष के नेता मुकेश अनिहोत्री ने 'तहलका' से बातचीत में कहा कि भाजपा को अपने गिरेबान में झाँककर देखना चाहिए। उसका डर समझा जा सकता है। राजनीति में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। जैसी सरकार भाजपा चला रही है, उससे जनता को भी अब समझ आ रहा है कि भाजपा को वोट देना बड़ी भूल थी। भाजपा के अहंकार को जनता आने वाले चुनावों में बड़ा झटका देगी। इन सब परिस्थितियों के बीच कांग्रेस के अध्यक्ष के चुनाव का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। कांग्रेस देश में विपक्ष का सबसे बड़ा चेहरा है, इसलिए छोटे दल भी मोदी सरकार के विरोध के लिए उसकी तरफ़ देखते हैं। इसलिए जो भी कांग्रेस का अध्यक्ष बनेगा, उसे कांग्रेस पार्टी ही नहीं, बल्कि पूरे विपक्ष को भी एकजुट करना होगा।

अब एक बड़ा सवाल यह है कि राहुल गाँधी सचमुच अध्यक्ष बनने के लिए न कर देते हैं, तो क्या होगा? पार्टी के एक वरिष्ठ नेता ने 'तहलका' से बातचीत में कहा कि मुझे नहीं लगता वह ज़िम्मा लेने से पीछे हटते हैं। सन् 2019 के चुनाव के बाद उनके इस्तीफ़े के अलग कारण थे। भाजपा राहुल को लेकर जो भी झूठ फैलाये, सच यह है कि राहुल के पास देश के लिए एक सोच है और उनमें बहुत क्षमता है। हाँ, भाषण की उनकी क्षमता उतनी बेहतर नहीं है। लेकिन सिर्फ़ भाषण ही नेता की क़ाबलियत का आधार नहीं माना जा सकता। बहुत अच्छा भाषण देने की कला का इस्तेमाल यदि आप जनता से झूठ बोलने के लिए करें, तो इसका क्या फ़ायदा? राहुल नहीं तो फिर कौन? इस मसले पर पार्टी के कुछ बड़े नेताओं से बातचीत का निचोड़ यह है कि राहुल ही पार्टी की सबसे बड़ी पसन्द हैं और यदि किसी कारणवश नहीं हुआ, तो प्रियंका गाँधी।

नेता मानते हैं कि पार्टी को गति देने के लिए फिर प्रियंका सबसे बेहतर विकल्प होंगी। यदि गाँधी परिवार से बाहर की बात आयी, तो अशोक गहलोत पहली पसन्द होंगे। बहुत-से नेता मानते हैं कि गुलाम नबी आज़ाद भी एक विकल्प होते, यदि हाल की लेटर बम जैसी घटना नहीं होती तो! यह कहा जाता है कि एक मौक़े पर गाँधी परिवार में अहमद पटेल को अध्यक्ष पद देने की बात आयी थी। यदि पार्टी में वरिष्ठ और युवा नेताओं की बात की जाए तो दिविजय सिंह, मल्लिकार्जुन खड़गे, पी. चिदंबरम, ए.के. एंटनी, सी.पी. जोशी, कमलनाथ, मीरा कुमार, पवन बंसल, के.सी. वेणुगोपाल, सचिन पायलट, तारिक अनवर, सलमान ख़ुर्शीद, शशि थरूर, रणदीप सुरजेवाला, जितेंद्र सिंह, अजय माकन, ओमान चांडी, मुकुल वासनिक, आनंद शर्मा आदि हैं। तहलका

tehelkaletters@gmail.com

देश में बदल रहे मुद्दे

हाल में कुछ राज्यों के निकाय चुनाव में कांग्रेस ने बेहतर प्रदर्शन किया है। किसान आन्दोलन के बाद देश की राजनीति में चीज़ें बदल रही हैं। युवा रोज़गार को लेकर भीतर हई भीतर घुटन महसूस कर रहे हैं। मोदी सरकार की प्राथमिकताओं ने भी युवाओं के बीच उसकी छवि को नुक़सान पहुँचाया है। युवाओं में मन में यह बात बैठ रही है कि मोदी सरकार की प्राथमिकताएँ दरअसल वो नहीं हैं, जो उसने सन् 2014 में बतायी थीं और सन् 2019 के विधानसभा चुनाव में जिन्हें दोहराया गया था। भाजपा की कोशिश इन लगभग सात साल में ध्रुवीकरण से देश के चुनाव जीतने की बन गयी है, जिससे आम आदमी को लगता है कि उसकी ज़रूरतें और मुश्किलें इस सरकार की प्राथमिकता में नहीं हैं।

किसान आन्दोलन के बाद युवा भी कमर कस रहे हैं। विपक्ष, ख़ासकर कांग्रेस और टीएमसी जैसे मोदी के ख़िलाफ़ सबसे मुखर राजनीतिक दल युवाओं की समस्यायों को हवा दे रहे हैं और यह बता रहे हैं कि वर्तमान सरकार उनकी समस्यायों को हल नहीं कर सकती, इसके लिए उन्हें सत्ता में परिवर्तन करना होगा। किसानों के साथ-साथ यदि युवा भी आन्दोलन का मन बनाते हैं, तो मोदी सरकार के लिए बड़ी कठिनाई पैदा हो सकती है। किसान आन्दोलन धीरे-धीरे मोदी सरकार के गले की फाँस बनता जा रहा है। कांग्रेस नेता राहुल गाँधी लगातार बहुत आक्रामक तरीक़े से मोदी सरकार को अमीरों की सरकार बता रहे हैं; जिसका जनता पर असर होता दिख रहा है। दैनिक ज़रूरत की चीज़ों के दाम पिछले कुछ दिनों में बहुत तेज़ी से बढ़े हैं, जिससे जनता में नाराज़गी पनप रही है। पेट्रोलियम पदार्थों, जिनमें पेट्रोल-डीजल के साथ-साथ रसोई गैस भी शामिल है; की क़ीमतें आसमान छू रही हैं। ऐसे में कांग्रेस सहित विपक्ष के पास विधानसभाओं के चुनाव से पहले मोदी सरकार को घेरने का बहुत बेहतर अवसर है। राहुल गाँधी और ममता बनर्जी ही ऐसे नेता हैं, जो इन सब मुद्दों को लेकर सबसे ज़्यादा मुखर हैं, जिसका लाभ भी निश्चित ही उनको ही मिलेगा। हाल के महीनों में जिस तरह मोदी सरकार ने लोगों की धरपकड़ की है, उससे भी देश-विदेश में उसकी छवि को लेकर सवाल उठे हैं, जो उसकी छवि पर बट्टा हैं।

अब आन्दोलन पर उतरे असम के आदिवासी चाय श्रमिक

- अनुसूचित जनजाति का दर्जा पाने के लिए कर रहे संघर्ष
- विधानसभा चुनाव नज़दीक आते ही उठायी आवाज़

राजन कुमार

पूर्वोत्तर के असम में विधानसभा चुनाव होने को हैं, जिसके मद्देनज़र आदिवासी चाय श्रमिक आन्दोलनरत हैं। वे ख़ुद को अनुसूचित जनजाति (एसटी) का दर्जा देने, दैनिक मज़दूरी बढ़ाने और आवास पट्टा देने की माँग कर रहे हैं। वे प्रतिदिन विभिन्न चाय बाग़ानों, गाँवों एवं कई ज़िला कार्यालयों पर अपनी माँगों को लेकर रैली एवं धरना-प्रदर्शन करते हैं। 7 फरवरी, 2021 को जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी असम के ढेकियाजुली में आरोप लगा रहे थे कि विदेशी ताक़तों द्वारा भारतीय चाय की छवि बिगाड़ने की साज़िश रची जा रही है; उसी दौरान असम के चाय श्रमिक उन्हें उनके पिछले वादे की याद दिला रहे थे।

ज्ञात हो कि सन् 2014 के केंद्रीय आम चुनाव एवं सन् 2016 में प्रदेश में हुए विधानसभा चुनाव के दौरान भाजपा ने चाय बाग़ानों में काम करने वाले आदिवासी चाय श्रमिकों को अनुसूचित जनजाति का दर्जा देने का वादा किया था। साथ ही, आवास का पट्टा देने और दैनिक मज़दूरी 351 रुपये करने सम्बन्धी घोषणा भी की गयी थी। इन घोषणाओं के कारण ही चाय श्रमिकों ने चुनाव में भाजपा को वोट देकर उसकी सरकार बनाने में अहम भूमिका निभायी थी। लेकिन भाजपा सरकार ने चाय श्रमिकों से किया अपना वादा नहीं निभाया है।

अब जबकि राज्य में विधानसभा चुनाव नज़दीक हैं, भाजपा कह रही है कि असम के छः समुदायों को अनुसूचित जनजाति का दर्जा दिया गया है; जिसमें चाय जनजाति भी शामिल है। बीते 8 फरवरी, 2021 को कछार ज़िले के सिलचर शहर में एक रैली में भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष जे.पी. नड्डा ने कहा कि भाजपा सरकार ने असम के छः समुदायों की दुर्दशा की पहचान की और उन्हें राज्य के अन्य जनजातियों को प्रभावित किये बिना अनुसूचित जनजाति का दर्जा दिया; कांग्रेस ने कभी ऐसा साहस नहीं दिखाया। रैली के दौरान असम के मुख्यमंत्री सर्बानंद सोनोवाल, वरिष्ठ मंत्री हेमंत बिश्वशर्मा और असम भाजपा अध्यक्ष रंजीत कुमार दास भी मौजूद थे। वहीं नड्डा के इस बयान को कांग्रेस ने झूठा और दुर्भाग्यपूर्ण क़रार देते हुए उनकी आलोचना की है। राज्यसभा सांसद और कांग्रेस के असम राज्य इकाई प्रमुख रिपुन बोरा ने कहा कि यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि भाजपा अध्यक्ष ने इस तरह की असंसदीय टिप्पणी की। मैं आपको बता सकता हूँ कि छः समुदायों को अनुसूचित जनजाति का दर्जा देने का बिल संसद में भी पेश नहीं किया गया है और इसे राष्ट्रपति की मंज़ूरी भी नहीं मिली है। फिर भाजपा सरकार उन्हें अनुसूचित जनजाति का दर्जा कैसे दे

सकती है? जानकारी के मुताबिक, असम के छः समुदायों- कोच राजबोंशी, ताई अहोम, चुटिया, मटक, मोरन और चाय जनजाति को अनुसूचित जनजाति का दर्जा दिये जाने का मामला अभी भी लंबित है। एसटी का दर्जा देने के लिए राज्य सरकार द्वारा केंद्र सरकार को अनुच्छेद-342 के तहत आवश्यक सिफ़ारिश के लिए अपना निष्कर्ष अभी अग्रेषित किया जाना है।

आक्रोशित आदिवासी नेता

अखिल असम आदिवासी छात्र संघ के अध्यक्ष प्रदीप ना ने 10 फरवरी, 2021 को बिश्वनाथ ज़िले में एक रैली के दौरान कहा कि सन् 2019 में चुनाव के कारण भाजपा सरकार ने असम के आदिवासी चाय श्रमिकों को अनुसूचित जनजाति का दर्जा देने के लिए लोकसभा में प्रस्ताव पारित कराया; लेकिन राज्यसभा में प्रस्ताव लाया ही नहीं गया। साथ ही आवास पट्टा देने और दैनिक मज़दूरी 351 रुपये करने का भी वादा पूरा नहीं किया, जिससे असम के आदिवासी चाय श्रमिक ख़ुद को ठगा-सा महसूस कर रहे हैं।

असम टी-ट्राइब स्टूडेंट्स एसोसिएशन के सचिव बसंत कुर्मी ने कहा कि चाय जनजातियों को अनुसूचित जनजाति का दर्जा देने की हमारी माँग लम्बे समय से लम्बित है। हमारे कार्यकर्ताओं ने सोनितपुर और बिश्वनाथ ज़िलों के कई चाय बाग़ानों में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के विरुद्ध रैली निकालकर इसलिए विरोध जताया, ताकि प्रधानमंत्री को हमसे किया गया अपना पुराना वादा याद आ सके और हमारी माँग पर सरकार ध्यान दे। अनुसूचित जनजाति का दर्जा, आवास पट्टा और दैनिक मज़दूरी सुनिश्चित करने में भाजपानीत सरकार की विफलता ने हमें काफ़ी निराश किया है। यह हालत तब है, जब हम असम समेत देश की अर्थ-व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं, फिर भी हमारे मज़दूर अल्प वेतन 167 रुपये प्रतिदिन पर काम कर रहे हैं।

ऑल आदिवासी स्टूडेंट एसोसिएशन ऑफ असम संगठन के प्रचार सचिव लक्ष्मण पारजा कहते हैं कि भाजपा सरकार ने हम लोगों को धोखा दिया गया है। इसलिए हम लोग लगातार भाजपा के ख़िलाफ़ आन्दोलन कर रहे हैं। भाजपा के अध्यक्ष जे.पी. नड्डा और अमित शाह चुनावी कार्यक्रमों में बता रहे हैं कि चाय बाग़ान के आदिवासियों को अनुसूचित जनजाति का दर्जा दे दिया गया है; जो पूरी तरह से झूठ है। वे हमें मूर्ख बना रहे हैं। हम सभी संगठन मिलकर चाय बाग़ानों, बस्तियों और गाँवों में जनसभा कर रहे हैं। हमारा नारा है- 'भाजपा हटाओ, असम के आदिवासियों को बचाओ'।

उन्होंने कहा कि हमारे साथ सरकार ऐसे बर्ताव कर रही है, जैसे हम किसी दूसरे देश के लोग हैं। पिछले साल हम लोग दिल्ली गये थे। वहाँ केंद्रीय मंत्री फनसिंह कुलस्ते और अर्जुन मुंडा से हमलों ने मुलाक़ात भी की, लेकिन भाजपा ने हमारे पास कोई विकृप नहीं छोड़ा है। बीते 10 फरवरी, 2021 को हम लोगों ने 20 हज़ार से भी अधिक संख्या में बिश्वनाथ ज़िला समाहरणालय

(ज़िले का अति महत्त्वपूर्ण कार्यालय) और कोर्ट का घेराव किया था। हमारी समस्याओं का हल कैसे होगा? इसका हम विकृप ढूँढ रहे हैं। हमें चाय बाग़ान आदिवासियों की भावनाओं और माँगों को समझने वाले विधायक चाहिए, जो हमारी बात करें। हम लोग आदिवासी नेशनल पार्टी ऑफ असम पार्टी बनाकर चुनाव लड़ने पर विचार कर रहे हैं।

चाय जनजाति बताना अपमान

लक्ष्मण पारजा ने ओ बताया कि हम मूल रूप से प्रकृति पूजक आदिवासी लोग हैं। हम झारखण्ड-मध्य प्रदेश के उरांव, मुंडा, हो, संथाल, गोंड आदिवासी हैं। ये लोग हमें चाय जनजाति कहकर हमारा अपमान करते हैं। क्या कोई चाय की जनजाति होती है? चाय जनजाति बोलकर हम लोगों को बहिष्कृत और वंचित रखने की कोशिश की जा रही है। असम में अनुसूचित जनजाति का दर्जा नहीं मिलने से हम लोगों को कई मूलभूत अधिकारों से वंचित होना पड़ता है। जबकि हम शान्तिपूर्ण और लोकतांत्रिक ढंग से लगभग 60 वर्ष से भी अधिक समय से अनुसूचित जनजाति दर्ज़े की माँग कर रहे हैं। लेकिन असम की सरकार ने ए.के. चंदा, शबर और लोकूर समितियों और आयोगों द्वारा की गयी स्पष्ट सिफ़ारिशों के बावजूद हमारी माँगों की उपेक्षा जारी रखा है।

30 फ़ीसदी आबादी की उपेक्षा

लक्ष्मण पारजा के मुताबिक, असम में आदिवासी चाय श्रमिकों की संख्या लगभग एक करोड़ है; जो वहाँ की 3.5 करोड़ आबादी का लगभग 30 फ़ीसदी है। यदि हम आदिवासी चाय श्रमिकों को अनुसूचित जनजाति का दर्जा मिल जाएगा, तो हम लोगों के लिए यहाँ लगभग 45 विधानसभा सीटें आरक्षित हो जाएँगी और हम लोग राज्य में सरकार बनाने में मुख्य भूमिका में आ जाएँगे। इसलिए यहाँ सत्ता में बैठे असमिया लोग आदिवासी चाय श्रमिकों को अनुसूचित जनजाति का दर्जा नहीं देना चाहते हैं। इतना ही नहीं, हमारी माँगों को लेकर हमें असमिया समुदायों द्वारा हिंसा का शिकार होना पड़ता है।

चाय श्रमिक आदिवासी कौन ?

असम और पश्चिम बंगाल के चाय के बाग़ानों में काम करने वाले ज़्यादातर मज़दूर झारखण्ड, छत्तीसगढ़, बिहार, ओडिशा और मध्य प्रदेश के मूल आदिवासी हैं। 19वीं सदी में अंग्रेज इन्हें चाय बाग़ानों में काम करने के लिए कुली

(मज़दूर) के रूप में लाये थे। पश्चिम बंगाल में तो इन्हें अनुसूचित जनजाति का दर्जा मिल चुका है, लेकिन असम में चाय श्रमिक अनुसूचित जनजाति की दर्जा पाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

ये चाय श्रमिक लम्बे समय से अनुसूचित जनजाति का दर्जा पाने या अलग कोटे के तहत 30 फ़ीसदी आरक्षण की माँग करते हैं। साथ ही राज्य के बोडोलैंड टेरिटोरियल काउंसिल और दीमा हसाओ ऑटोनोमस काउंसिल की तर्ज पर चाय उत्पादक इलाक़ों में भी एक अलग स्वायत्त परिषद् बनाने की माँग भी लम्बे समय से कर रहे हैं। माना जाता है कि इन चाय श्रमिकों में कुल 60 फ़ीसदी यानी लगभग 60 लाख ही ऐसे श्रमिक हैं, जो आदिवासी हैं। इन मज़दूरों की संख्या उत्तरी असम, ख़ासतौर से तिनसुकिया, डिब्रूगढ़, गोलाघाट, शिवसार और सोनितपुर ज़िलों (जो चाय उत्पादन के लिए महत्त्वपूर्ण हैं); में ज़्यादा है।

पहले भी की जा चुकी हैं अनुशंसाएँ

जनजातीय समुदायों की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और स्वास्थ्य स्थिति की जाँच करने और उनमें सुधार के लिए उपयुक्त हस्तक्षेपकारी उपायों की सिफ़ारिश करने के लिए प्रधानमंत्री कार्यालय द्वारा सन् 2013 में प्रो. वर्जिनियस खाखा की अध्यक्षता में गठित एक उच्चस्तरीय समिति ने भी असम के आदिवासी चाय श्रमिकों को झारखण्ड, ओडिशा, छत्तीसगढ़ के मूल आदिवासी के रूप में रेखांकित करते हुए कहा है कि पूर्व-स्वतंत्रता काल में झारखण्ड, ओडिशा और छत्तीसगढ़ की जनजातियों, जैसे-मुंडा, उरांव, संथाल एवं अन्य ने क़रार-बद्ध मज़दूरों के रूप में असम के विशाल चाय बाग़ानों की ओर पलायन किया था। किन्तु स्वतंत्रता के बाद उन्हें असम में अनुसूचित जनजाति की सूची में शामिल नहीं किया गया है।

वहीं सन् 1965 में अनुसूचित जनजातियों को परिभाषित करने के मानदण्ड पर विचार करने के लिए गठित की गयी लोकूर समिति ने असम के आदिवासी चाय श्रमिकों के बारे में कहा कि 60 वर्ष या उससे भी बहुत पहले काफ़ी संख्या में संथाल, मुंडा, उरांव और गोंड आदिवासी समुदाय के लोग बिहार, उड़ीसा और मध्य प्रदेश से पलायन कर उत्तरी बंगाल, असम, मणिपुर और त्रिपुरा के चाय बाग़ानों में स्थायी रूप से बस गये। इनकी संख्या लगभग 20 लाख है। चूँकि पिछड़ा वर्ग आयोग (1953) ने इन्हें सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ा होने के कारण ओबीसी के रूप में श्रेणीकरण किया है। अनुसूचित क्षेत्र और अनुसूचित जनजाति आयोग ने भी इन्हें अनुसूचित जनजाति का दर्जा दिये जाने के लिए ज़ोर नहीं दिया है। बस इतना ही कहा है कि उन लोगों को अपने घर और जीवनशैली से सम्बन्ध बनाये रखने के लिए सहायता दी जानी चाहिए।

लोकूर समिति ने इस बात को भी रेखांकित करते हुए लिखा है कि असम सरकार ने ज़मीनी स्तर पर उनकी स्थिति में किसी भी बदलाव का लगातार विरोध किया है और कहा है कि इससे स्थानीय राजनीतिक ढाँचे को गम्भीर रूप से नुक़सान होगा। हमें औसत अप्रवासी मज़दूरों के बारे में भी विश्वसनीय रूप से बताया गया है। जिन्हें दैनिक मज़दूरी और विशेष क़ानून द्वारा संरक्षण प्राप्त होता है, उनके आर्थिक मानक अन्य आदिवासी समुदायों की तुलना में बेहतर हैं। यह भी बताया गया है कि चाय बाग़ानों में काम करने वाले आदिवासी समुदाय के लोगों में बदले माहौल के कारण आदिवासी गुणों में ह्रास हो रहा है और उन्हें विशेष शैक्षणिक सहायता दी जा रही है।

क्या-क्या हैं समस्याएँ

पिछले सात दशकों से आदिवासी चाय श्रमिक राजनीतिक पार्टियों के लिए वोट बैंक बने हुए हैं। चाय श्रमिकों की मुख्य माँग आवास के लिए पट्टा और मज़दूरी में बढ़ोतरी ही रहती है। वर्तमान में इन्हें दैनिक 167 रुपये मज़दूरी दी जाती है और चाय बाग़ान में ही टीन शेड्स के क्वार्टर्स में रहने की जगह दी जाती है। चाय श्रमिक काफ़ी समय से दैनिक मज़दूरी 351 रुपये करने की माँग कर रहे हैं, जिसे असम सरकार ने अभी तक नहीं माना है। दूसरे राज्यों के चाय श्रमिकों को मिलने वाली दैनिक मज़दूरी की बात करें, तो केरल के चाय श्रमिकों को 380 रुपये दैनिक मज़दूरी के साथ कई तरह की अन्य सुविधाएँ मिलती हैं। जबकि तमिलनाडु के चाय श्रमिकों को 333 रुपये दैनिक मज़दूरी मिलती है। पश्चिम बंगाल के चाय बाग़ानों में 176 रुपये दैनिक मज़दूरी मिलती थी, जिसे हाल ही में बढ़ाकर 202 रुपये किया गया है।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की टिप्पणी

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत के असम में चाय बाग़ानों में श्रमिकों के अधिकार का खुला उल्लंघन कर उन्हें स्वास्थ्य, अनुदानित दर पर खाद्यान्न, आवास और साफ़ पेयजल आदि बुनियादी सुविधाओं से

वंचित रखा गया है। साथ ही उनका यौन उत्पीड़न भी होता है।

बँधुआ मज़दूर बनते चाय श्रमिक

असम के एक चाय श्रमिक रिंटू बोरा कहते हैं कि असम के चाय उद्योग पीढ़ियों से हम आदिवासियों का शोषण कर रहे हैं। हमें बँधुआ मज़दूर में बदल रहे हैं। वे हमें अयोग्य, ग़रीब, अनपढ़ बनाये रखने और अलग-थलग करने के लिए प्रयासरत हैं। चाय बाग़ानों में ग़ुलामी की औपनिवेशिक शोषक संरचना के अभी तक बने होने के कारण ही श्रमिकों को बहुत कम मज़दूरी, अस्वस्थकारी जीवन और देर समय तक काम करने की मजबूरी बनी हुई है। पश्चिमी असम में कोकराझार, बोंगाईगाँव और धुबरी ज़िलों में सन् 1996 और सन् 1998 के जघन्य नरसंहारों ने हज़ारों चाय श्रमिक आदिवासियों को बेघर कर दिया था। कई अभी भी राहत शिविरों में रह रहे हैं। अक्टूबर 2010 में चाय श्रमिक आदिवासियों के घरों और सम्पत्तियों को सरकारी लोगों के संरक्षण में अमानवीय और अवैध ढंग से जलाया गया। यहाँ तक कि स्कूलों और पूजा स्थलों को भी जला दिया गया। ऐसे अत्याचारों की सूची बहुत लम्बी है। यह शर्म की बात है कि भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में आज भी ऐसी अमानवीय स्थिति बनी हुई है। ब्राह्मणवादी व्यवस्था ने असमिया जातीय-राष्ट्रवाद को संचालित किया है, जो मेहनतकश चाय श्रमिक आदिवासियों को भूमिहीन बनाये रखने की परियोजना को आगे बढ़ाता है।

वरिष्ठ आदिवासी बुद्धिजीवी, सामाजिक कार्यकर्ता तथा दिल्ली से प्रकाशित साप्ताहिक अख़बार 'दलित आदिवासी दुनिया' के प्रकाशक व संपादक मुक्ति तिर्की बताते हैं कि आदिवासी चाय श्रमिकों का सबसे बड़ा शोषण यह है कि श्रमिकों को भूमिहीन और आवासहीन बनाकर रखा जा रहा है। नियमानुसार जो भी ग़ैर-मजरुआ सरकारी ज़मीन का मामला है, उस ज़मीन पर यदि कोई पाँच या 10 साल घर बनाकर रह रहा है, तो उसको उसका पट्टा (मालिकाना हक़) मिलना चाहिए। यहाँ पर ये लोग 150 साल से हैं। वनाधिकार क़ानून के तहत भी ये लोग इस ज़मीद का पट्टा पाने के हक़दार हैं। लेकिन क़ानूनी दाँव-पेच के सहारे इन्हें यह अधिकार नहीं दिया जा रहा है। आपको समझना होगा कि यहाँ दो बातें हैं- एक है क़ानूनी और दूसरी राजनीतिक। इसमें बाग़ान मालिक, सरकार और राजनीतिक लोगों की आपसी मिलीभगत से यहाँ के श्रमिक बँधुआ मज़दूर बने रहने को मजबूर हैं; जबकि दूसरी ओर 100 साल के दरमियान ये जहाँ से आये थे, मसलन- झारखण्ड, छत्तीसगढ़ या देश के किसी अन्य हिस्से से; वहाँ से ये कट चुके हैं। वहाँ अब इनके पास ज़मीद-जायदाद नहीं है। वर्तमान में जहाँ ये काम कर रहे हैं, वही इनका ठिकाना है और पता भी। अपने निवास स्थल को ये सरकारी क्वार्टर बोलते हैं। अगर इन क्वार्टर्स से इन्हें निकाल दिया जाए, तो ये कहाँ जाएँगे?

फ़िलहाल आदिवासी चाय श्रमिकों की समस्याओं का कोई हल नहीं नज़र आ रहा है। चाय श्रमिक संगठनों ने अपनी माँगों को लेकर आन्दोलन तेज़ कर दिये हैं और रोज़ जगह-जगह चाय बाग़ानों, बस्तियों, गाँवों में आन्दोलन कर रहे हैं। असम की भाजपा सरकार में वित्त मंत्री हेमंत बिस्वाशर्मा ने कहा है कि चुनाव आयोग के आचार संहिता के ऐलान से पहले ही श्रमिकों के मज़दूरी में बढ़ोतरी का ऐलान कर दिया जाएगा। जबकि केंद्रीय मंत्री स्मृति ईरानी ने गुजरात में एक कार्यक्रम के दौरान कहा कि असम विधानसभा चुनाव के बाद यदि भाजपा सरकार बनी, तो चाय श्रमिकों के मज़दूरी में बढ़ोतरी की जाएगी। दोनों ही भाजपा नेताओं के बयानों में विरोधाभास है। ऐसे में आने वाला समय ही बताएगा कि केंद्र और राज्य की भाजपा सरकार चाय श्रमिक आदिवासियों के लिए क्या क़दम उठाती है? और चाय श्रमिक संगठन अपने अधिकारों को हासिल करने के लिए कौन-सा रास्ता अख़्तियार करते हैं? तहलका

tehelkaletters@gmail.com

फेल हो गया पाकिस्तान में विपक्ष को तोड़ने का खेल

विशाल लोकतंत्र समर्थक आन्दोलन अब 26 मार्च के लिए पुनर्निर्धारित

गोपाल मिश्रा

पाकिस्तान में लोकतंत्र के लिए विपक्ष के मार्च की नयी तारीख़ 26 मार्च तय की गयी है। उस दिन सभी प्रमुख राजनीतिक दलों का प्रतिनिधित्व करने वाले 26 कारवाँ इस्लामाबाद की ओर मार्च करेंगे, जहाँ इमरान ख़ान सरकार से तत्काल इस्तीफ़े की माँग की जाएगी। इससे पहले पाकिस्तान डेमोक्रेसी मूवमेंट (पीडीएम) ने जनवरी 2021 में राजधानी इस्लामाबाद में एक लॉन्ग मार्च आयोजित करने की योजना बनायी थी; लेकिन इसे स्थगित कर दिया गया था।

दो महीने से अधिक समय के अंतराल के बाद पीडीएम, जो की देश के विपक्षी दलों का एक संयुक्त मोर्चा है; पाकिस्तानी प्रधानमंत्री इमरान ख़ान और सेना के समर्थन वाले उनके राजनीतिक संगठन पाकिस्तान तहरीक-ए-इंसाफ़ (पीटीआई) से दो-दो हाथ करने को तैयार है। पीडीएम के बैनर तले विरोध प्रदर्शन अक्टूबर, 2020 में शुरू हो गया था, जिसने पाकिस्तान के प्रमुख शहरों कराची से लाहौर तक व्यापक स्तर पर लोगों का ध्यान आकर्षित किया था।

पीडीएम का नेतृत्व जमीयत उलेमा इस्लामिया-फ़ज़लुर (जेयूआई-एफ) के नेता मौलाना फ़ज़ल-उर-रहमान कर रहे हैं, जिनकी हथियारों से लैस तालिबानियों में ख़ासी पैठ है और अन्य दो प्रमुख राजनीतिक दल पाकिस्तान मुस्लिम लीग-एन (पीएमएल-एन) और पाकिस्तान पीपुल्स पार्टी (पीपीपी) हैं। इन दलों में मौलाना की जेयूआई-एफ को सशस्त्र स्वयंसेवकों का साथ है। यूनियन ऑफ सोशलिस्ट सोवियत रिपब्लिक (यूएसएसआर) के ख़िलाफ़ अफ़ग़ान संघर्ष के दौरान उन्होंने विभिन्न आतंकवादी समूहों के तहत हज़ारों स्वयंसेवकों का सहयोग दिया था।

तीन प्रमुख राजनीतिक दलों के अलावा पीडीएम में आठ अन्य क्षेत्रीय राजनीतिक संगठन शामिल हैं; जिनमें अवामी नेशनल पार्टी, अवामी नेशनल पार्टी-वली, बलूचिस्तान नेशनल पार्टी (मेंगल) शामिल हैं। पिछले दो महीनों के दौरान, आईएसआई ने पीटीआई और उसके समर्थकों ने इस संयुक्त मोर्चे के टुकड़े करने के लिए काफ़ी प्रयास किये, लेकिन वे गठबन्धन को तोड़ नहीं कर सके। यहाँ तक कि मुहाजिरों के टूट चुके राजनीतिक ग्रुप (उत्तर प्रदेश के मुसलमान जो सिंध के शहरों में बसे हैं), मुत्ताहिदा क़ौमी आन्दोलन (एमक्यूएम) पर भी भरोसा नहीं किया जा रहा है।

एमक्यूएम की स्थापना छात्र नेता अल्ताफ़ हुसैन ने 1984 में की थी। दो दशकों 1988-2013 से अधिक की अवधि के दौरान एमक्यूएम ने पाकिस्तान की संघीय सरकार में सत्ता साझा की। हालाँकि इसका नारा मुत्ताहिदा है, जिसका अर्थ है- एकता। लेकिन आईएसआई को सन्देह है कि एमक्यूएम भारत समर्थक है और देश के विभाजन को समाप्त करने की इच्छुक है। इसके संस्थापक अल्ताफ़ हुसैन के निर्वासन के बाद इसे विभाजित कर दिया गया और इससे टूटने वाले ग्रुप ने पीटीआई से साझीदारी कर ली, लेकिन पीडीएम की कराची रैली के दौरान, इसके

पिछले दो साल के दौरान इमरान ख़ान का राजनीतिक आधार काफ़ी कम हो गया है। आगामी सीनेट चुनाव में उन्हें डर है कि ये विधायक विपक्षी दलों में शामिल हो सकते हैं। पीटीआई विधायकों को पार्टी प्रत्याशियों के ख़िलाफ़ वोट देने से रोकने के लिए इमरान सरकार ने पहले ही सुप्रीम कोर्ट में राष्ट्रपति का एक सन्दर्भ दिया है; जबकि एक संविधान संशोधन बिल संसद में लाकर सीनेट के लिए खुले मतदान (ओपन वोट) की माँग है। सर्वोच्च न्यायालय को इस सन्दर्भ पर निर्णय लेना बाक़ी है।

कार्यकर्ताओं को लोकतांत्रिक आन्दोलन का समर्थन करते देखा गया।

पीडीएम का गठन लाहौर में पीपीपी नेता, बिलावल भुट्टो के नेतृत्व में सितंबर, 2020 में आयोजित एक सम्मेलन के दौरान किया गया था। नवाज़ शरीफ़ के सेना-विरोधी आक्रामक भाषण के बाद यह और गति पकड़ रहा है; जिन्होंने वीडियो लिंक के माध्यम से अपने सम्बोधन में कहा था कि इमरान ख़ान हमारा लक्ष्य नहीं हैं। हमारा संघर्ष उन लोगों के ख़िलाफ़ है, जो इमरान ख़ान को सत्ता में लाये।

नज़म सेठी जैसे कुछ प्रमुख पाकिस्तानी पत्रकारों का कहना है कि इमरान ख़ान के ख़राब शासन ने देश के संस्थान (पाकिस्तानी सेना के लिए इस्तेमाल की गयी एक व्यंजना) को प्रमुख राजनीतिक पार्टियों पीएमएल-एन और पीपीपी को नुक़सान पहुँचाकर राजनीतिक व्यवस्था को नयी पटकथा की कोशिश को विफल कर दिया है। नवाज़ शरीफ़ सहित इन दलों के अभिजात वर्ग को भ्रष्टाचार के मामलों में फँसाया गया और उन्हें दोषी ठहराया गया; लेकिन इन क़दमों ने उलटा असर किया है। विपक्षी दल न केवल पीडीएम के बैनर तले एकजुट हुए हैं, बल्कि उन्होंने खुले तौर पर सेना पर गन्दी राजनीतिक भूमिका का आरोप लगाया है।

सेठी जैसे टिप्पणीकारों के अनुसार, इमरान ख़ान का सीनेट में बहुमत प्राप्त करके अपनी राजनीतिक शक्ति दिखाने का प्रयास भी विफल हो गया है। 52 सदस्य रिटायर होने वाले हैं; जो 104 सदस्यीय सीनेट का 50 फ़ीसदी हैं। यह सदस्य 11 मार्च को अपना छः साल का कार्यकाल पूरा कर लेंगे। हालाँकि इस बार ख़ैबर पख़्तूनख़्वा (केपी) प्रान्त के साथ विलय के बाद पूर्ववर्ती संघीय रूप से प्रशासित जनजातीय क्षेत्रों (फाटा) की चार सीटों के लिए कोई मतदान नहीं होगा।

मतदान 48 सीनेटरों के चुनाव के लिए होगा- केपी और बलूचिस्तान से क्रमशः 12-12, पंजाब और सिंध से 11-11 और इस्लामाबाद से दो। सभी प्रान्तीय विधानसभाओं में पार्टी की स्थिति के आधार पर गणना से पता चलता है कि यदि सभी विधायक अपनी-अपनी पार्टियों की नीति के अनुसार मतदान करते हैं, तो सत्ताधारी पीटीआई को 21 सीटें जीतने की उम्मीद है। इसके बाद पीपीपी और बलूचिस्तान अवामी पार्टी (बीएपी) को छः-छः और पीएमएल-एन को पाँच सीटें आगामी सीनेट चुनावों में मिल सकती हैं। अगर ऐसा होता है, तो पीटीआई नये सीनेट में 28 सीनेटरों के साथ सबसे बड़ी पार्टी बन जाएगी, इसके बाद पीपीपी के 19, पीएमएल-एन के 17 और बीएपी के साथ 13 सीनेटर होंगे।

पिछले दो साल के दौरान इमरान ख़ान का राजनीतिक आधार काफ़ी कम हो गया है। आगामी सीनेट चुनाव में उन्हें डर है कि यह विधायक विपक्षी दलों में शामिल हो सकते हैं। पीटीआई विधायकों को पार्टी प्रत्याशियों के ख़िलाफ़ वोट देने से रोकने के लिए इमरान सरकार ने पहले ही सुप्रीम कोर्ट में राष्ट्रपति का एक सन्दर्भ दिया है; जबकि एक संविधान संशोधन बिल संसद में लाकर सीनेट के लिए खुले मतदान (ओपन वोट) की माँग है। सर्वोच्च न्यायालय को इस सन्दर्भ पर निर्णय लेना बाक़ी है; जबकि विपक्षी दलों ने पहले ही, जब चुनाव कुछ ही सप्ताह दूर हैं; घोषणा कर दी है कि वे सरकार से ऐसे क़दम का समर्थन नहीं करेंगे।

ऐसी ख़बरें हैं कि विपक्षी दलों और सेना के बीच परदे की पीछे बातचीत चल रही है। पिछले दो महीनों के दौरान, शरीफ़, जो संस्थान (सेना) के साथ किसी भी तरह के संवाद का विरोध कर रहे थे; ने दिवंगत नेता बेनजीर भुट्टो के पति आसिफ़ अली ज़रदारी को सेना के साथ समझौते पर काम करने की अनुमति दी थी। इन गोपनीय संवादों के नतीजे अभी ज्ञात नहीं, लेकिन संकेत हैं कि वर्तमान में जारी राजनीतिक जंग में सेना तटस्थ रहने का फ़ैसला कर सकती है।

पीटीआई को सीनेट में बहुमत के समर्थन की धुँधली उम्मीद के साथ, लगभग पाँच महीने पुराना टकराव विपक्षी दलों के पक्ष में जाता दिख रहा है। यह साझा विपक्षी गठबन्धन इमरान ख़ान और उनकी पार्टी के ख़िलाफ़ मोर्चा खोले हुए हैं। उनके इस्तीफ़े की माँग कर रहे विपक्षी दलों के टुकड़े करने की इमरान की योजना तो विफल रही है और उन्होंने अगले महीने सरकार को चुनौती देने के लिए अपनी एकता को सफलतापूर्वक बनाये रखा है। पीपीपी के चेयरमैन बिलावल भुट्टो ज़रदारी और पीएमएल-एन की उपाध्यक्ष मरियम नवाज़ के साथ तीन शीर्ष विपक्षी नेताओं, मौलाना फ़ज़ल-उर-रहमान ने फिर से पुष्टि की है कि प्रस्तावित रैली देश के इतिहास में एक ऐतिहासिक क्षण होगा, जब इमरान ख़ान की कठपुतली सरकार को आख़िरकार इतिहास में दफ़्न कर दिया जाएगा और सुरक्षा बल (सेनाएँ) देश को चलाने के बजाय देश की रक्षा करने की अपनी भूमिका पर वापस लौट जाएँगे। तहलका

tehelkaletters@gmail.com

सरकारी बैंकों और एटीएम का बुरा हाल

राजीव दुबे

देश में बैंकों और एटीएम की कोई कमी नहीं है। अस्पतालों, कॉर्पोरेट सेक्टर, शिक्षण सस्थानों और बाज़ारों के साथ-साथ कॉलोनियों में एटीएम जहाँ-तहाँ देखे जा सकते हैं। लेकिन ये एटीएम कितने सही ढंग से काम करते हैं? यह तो एटीएम से पैसे निकालते समय ही मालूम पड़ता है। सरकार और बैंकों की कारगुज़ारियों पर आपत्ति के साथ रोष व्यक्त करते हुए लोगों ने तहलका संवाददाता को बताया कि एटीएम से अब दो चार सौ रुपये निकालना मुश्किल है, कम-से-कम 500 रुपये निकलते हैं। क्योंकि एटीएम में अक्सर 100 और 200 के नोट न होने के कारण लोगों को काफ़ी निराशा होती है।

ग्रहणी प्रियंका का कहना है कि सरकार एक ओर तो तकनीकी, डिजिटलीकरण को बढ़ावा देने के लिए तामाम दावे करती है और पैसों के लेन-देन में पारदर्शिता लाने के लिए ईमानदारी का ढिंढोरा पीटती है, जिसके लिए जन-मानस सरकार के दिशा-निर्देशों का पालन भी करते हैं। लेकिन सरकारी काम में धरातल पर कुछ ओर ही नज़र आता है। सीमापुरी दिल्ली निवासी रागिनी का कहना है कि जबसे देश में नोटबन्दी हुई है, तबसे देश में रुपयों की एटीएम और बैंकों से निकासी ही मुश्किल हो गयी है। तभी से बैंकों में सर्वर में गड़बड़ी और इंटरनेट के बन्द होने जैसी समस्याएँ सामने आ रही हैं। अक्सर बैंकों में सर्वर में गड़बड़ी के कारण लोगों को पैसों समय पर नहीं मिल पाते हैं।

एसबीआई के वरिष्ठ अधिकारी हरीश कुमार का कहना है कि यह बात तो सच है कि इंटरनेट के ज़माने में तकनीकी गड़बड़ी के कारण लोगों को बैंकों और एटीएम की लाइनों में लगना पड़ता है, जो कि ग़लत है। क्योंकि यह अर्थ-युग है और बिना अर्थ के सब व्यर्थ है। लोग अब पैसों के साथ एटीएम कार्ड अपनी जेब में डालकर चलते हैं कि ज़रूरत पड़ने पर एटीएम से पैसे निकाल लेंगे, लेकिन अक्सर उन्हें निराशा ही हाथ लगती है।

पीएनबी, पटपड़गंज में आये दिन यह समस्या रहती है। यहाँ के बैंक कर्मचारियों का कहना है कि एटीएम से 100, 200 के नोटों का निकलना एक

तकनीकी समस्या है, जो सरकार को ही दूर करनी होगी। क्योंकि जब नोटबन्दी हुई थी, तब सिर्फ़ 500 के नोट का साइज बदला गया था और पुराने नोट की जगह नया 500 का नोट आया था, जबकि 1000 का नोट पूरी तरह से चलन से बन्द हो गया। उसकी जगह 2000 का नोट आया, जो एटीएम कई जगह आज भी साइज की समस्या के चलते नहीं निकल रहा है। नोटबन्दी के बाद नये 100 के नोट और पुराने 100 के नोट में भी साइज में बड़ा अन्तर है, जो कहीं एटीएम में निकलता है; तो कहीं नहीं निकलता।

इस बारे एसबीआई बैंक के मनोज कुमार का कहना है कि समस्या तो नोटबन्दी के समय ही आ गयी थी। सरकार और बैंक प्रबन्धकों ने अथक प्रयास से इस समस्या का समाधान शहरों में तो किया, लेकिन तहसील और ग्रामीण स्तर पर आज भी यह समस्या विकराल रूप लिए हुए है। यहाँ पर एटीएम एक दिखावे का डिब्बा साबित हो रहे हैं। दिल्ली के व्यापारी संतोष बंसल कहना है कि सरकार अपनी उपलब्धियों के तौर पर यह बताती है कि देश में ढाई लाख के क़रीब एटीएम हैं, जो लोगों को डिजिटल युग में काफ़ी सुविधा दे रहे हैं। लेकिन उन एटीएम पर कोई ध्यान नहीं देता है, जो कई-कई दिनों तक बन्द रहते हैं या पैसों के अभाव में एक ख़ाली मशीन के तौर पर दिखते हैं।

कैनरा बैंक के क्षेत्रीय प्रबन्धक सुनील कुमार सोबती का कहना है कि बैंक व एटीएम से उपभोक्ताओं को पैसा निकालने में किसी प्रकार कि परेशानी न हो, इसके हम हर दिक़्क़त को दूर करते हैं। रहा सवाल 100 के नोट के एटीएम से निकलने का तो उसको दूर करने के लिए जो भी प्रयास किये जा सकते हैं; वो किये जा रहे हैं।

बताते चलें देश में बैंकों के निजीकरण और सरकारी बैंकों के विलय के बाद भी समस्या जस-की-तस है। इस बारे में बैंक और आर्थिक मामलों के जानकार सचिन सिंह का कहना है कि अगर सरकारी एटीएम और बैंकों में इस तरह की समस्या बनी है, तो यह सियासत का ही नतीजा है। क्योंकि अगर सरकारी एटीएम में रुपयों की निकासी न होगी, तो ख़ुद-ब-ख़ुद लोगों में निजीकरण के प्रति लगाव नहीं रहेगा, बल्कि विरोध करने से लोग हिचकेंगे और सरकार को बैंकों के निजीकरण करने पर बल मिलेगा। क्योंकि बैंकों के निजीकरण कराने के लिए देश के पूँजीपतियों की एक लॉबी काम कर रही है; जो सुविधाओं के नाम पर खाताधारकों से अपनी कमीशन में मनमानी करेगी।

बैंक में रुपये जमा करने आये आलोक कुमार ने तहलका संवाददाता को बताया कि सरकारी बैंकों भरोसे का प्रतीक बैंक माना जाता है। लोग विश्वास के साथ बैंकों में पैसा जमा करने आते हैं, तो उनको बैंक कर्मचारी और अधिकारी पैसा जमा करने के लिए एटीएम (डिपॉजिट मशीन) में जमा करने के लिए बोलते हैं; जो अक्सर बन्द रहती है। देश के अधिकतर सरकारी बैंकों और अनेक एटीएम का यही हाल है। त

tehelkaletters@gmail.com

किरण बेदी से अचानक क्यों छिना उप राज्यपाल का पद ?

महामहिम राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद के दिशा-निर्देश पर पुडुचेरी की उप राज्यपाल किरण बेदी को रातोंरात पद से हटा दिया गया। अचानक हुए इसके निर्णय के सियासी मायने स्पष्ट संकेत दे रहे हैं कि भले ही पुडुचेरी के चुनाव में अभी तीन महीनों से अधिक का समय है, मगर वहाँ पर माहौल चुनावी रंग में रंगने लगा है। बताते चलें कि पुडुचेरी में मुख्यमंत्री पी. नारायणसामी और उप राज्यपाल के बीच सियासी तालमेल ठीक नहीं चल रहा था।

मौजूदा वक़्त में वहाँ की राजनीति में कांग्रेस बनाम किरण बेदी का माहौल बनता जा रहा था। कांग्रेस व मुख्यमंत्री नारायणसामी साफ़ संकेत दे रहे थे कि उप राज्यपाल (किरण बेदी) पुडुचेरी में चुनी हुई सरकार को काम नहीं करने दे रही हैं। वह बेवजह सरकार के कामों में अड़ंगा लगाती हैं और दख़ल देती हैं, जिससे विकास के काम और जनता के हित में फ़ैसले नहीं लिये जा रहे हैं। मामला इस क़दर सियासी होता जा रहा था कि पुडुचेरी भाजपा प्रदेश इकाई से लेकर दिल्ली में बैठे आलाकमान को इस बात का अहसास होने लगा था कि अगर समय रहते किरण बेदी को नहीं हटाया गया, तो मामला चुनावी समर में ज़रूर असर दिखाएगा। क्योंकि पुडुचेरी की सियासत में नारायणसामी एक दिग्गज नेता माने जाते हैं। वह कांग्रेस के निष्ठावान नेता माने जाते हैं। उनको मुख्यमंत्री भी तब बनाया गया था, जब वह वहाँ के विधायक तक नहीं थे। ऐसे में भाजपा किसी प्रकार का कोई जोखिम लेना नहीं चाहती। क्योंकि पुडुचेरी में वैसे ही भाजपा का कोई ख़ास जनाधार नहीं है। फिर भी भाजपा इस बार चुनाव में पूरे दमख़म के साथ ताल ठोंकना चाहती है।

बताते चलें कि भाजपा भाँप गयी थी कि वैसे ही देश की राजनीति में किसान आन्दोलन, महँगाई, बेरोज़गारी और डीजल, पेट्रोल व गैस के बढ़ते दामों के कारण विरोधी दल भाजपा के ख़िलाफ़ बोलने का कोई मौक़ा नहीं छोड़ेंगे। ऐसे में अगर किरण बेदी के कामों को कांग्रेस के साथ-साथ क्षेत्रीय दल भी चुनावी मुद्दा बनाएँगे, तो भाजपा को काफ़ी दिक़्क़त हो सकती है। इसलिए आनन-फ़ानन में किरण बेदी को हटाकर तेलंगाना की राज्यपाल तमिलिसाई सौंदर्यराजन को पुडुचेरी के उप राज्यपाल के तौर पर नियुक्त किया गया है।

कांग्रेस का कहना है कि जो घटना था, वो घट गया। जो नुक़सान किरण बेदी ने पुडुचेरी के लिए किया है, उसकी भरपाई तो अब भाजपा नहीं कर पाएगी। पुडुचेरी के मुख्यमंत्री नारायणसमी का कहना है कि गत पाँच साल से किरण बेदी और प्रदेश सरकार पुडुचेरी के बीच सियासी सामंजस्य ठीक नहीं रहा है। जिसके कारण प्रदेश में विकास के अलावा और अन्य कामकाज सुचारू रूप से ठीक नहीं चल पाये; जिसका ख़ामियाज़ा सरकार के साथ-साथ पुडुचेरी की जनता ने भुगता है।

सवाल यह है कि जब किरण बेदी को सन् 2016 में पुडुचेरी का उप राज्यपाल बनाया गया था और उनके कार्यकाल के अभी तीन महीने के क़रीब शेष थे, तो ऐसी क्या ज़रूरत आ पड़ी की रातोंरात उन्हें पद से हटाना पड़ा। पुडुचेरी में मौजूदा समय में ख़ासकर भाजपा के बीच इस पर बहस चल रही है कि किरण बेदी एक ईमानदार और दबंग आईपीएस रही हैं। उनकी प्रशासनिक क्षमता को कम नहीं आँका जा सकता है। लेकिन में सियासत में नफ़ा-नुक़सान, अपने-पराये के साथ-साथ स्वार्थ की राजनीति को विशेष महत्त्व दिया जाता है। इसलिए इस पर ग़ौर किया जा रहा था कि किरण बेदी बनाम कांग्रेस के बीच चुनाव फँसता नज़र आ रहा है; जो कि भाजपा की पुडुचेरी की सियासत के लिए ठीक नहीं था। पुडुचेरी 30 सदस्यीय विधानसभा है। इस लिहाज़ से एक-एक सीट बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

सत्ता के गलियारों में ज़रूर अटकलों का बाज़ार गर्म है कि किरण बेदी को या तो दिल्ली का उप राज्यपाल बनाया जा सकता है या फिर केंद्र की राजनीति में अहम् ज़िम्मेदारी सौंपी जा सकती है। ख़ैर, यह तो आने वाला समय ही तय करेगा। लेकिन इतना ज़रूर है कि अगर किरण बेदी को दिल्ली की उप राज्यपाल बनाया गया तो, निश्चित तौर पर दिल्ली की राजनीति कुछ और ही होगी। क्योंकि किरण बेदी और दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविन्द केजरीवाल दोनों ही अन्ना के जन आन्दोलन से निकले हैं।

सन् 2015 में दिल्ली के कृष्णा नगर से भाजपा के टिकट पर किरण बेदी चुनाव लड़ चुकी हैं, जहाँ उन्हें हार का मुँह देखना पड़ा था। इसे अजीब संयोग कहें कि सियासत का हिस्सा कि एक दिन पहले किरण बेदी को पुडुचेरी के उप राज्यपाल के पद से हटाया गया है कि उसके अगले दिन में चार विधायकों के इस्तीफ़े के कारण नारायणसामी की सरकार अल्पमत में आ गयी।

फ़िलहाल आने वाले दिनों में पुडुचेरी के सियासी आरोप-प्रत्यारोप की बोछार करते चुनावी महासमर में दिखेंगे। किरण बेदी को उप राज्यपाल के पद से हटाये जाने को मुख्यमंत्री नारायणसामी अपनी जीत बता रहे हैं। ऐसे में वहाँ नये उप राज्यपाल की भूमिका बहुत ही महत्त्वपूर्ण होने वाली है।

(राजीव दुबे)
tehelkaletters@gmail.com

‘सम्मान की क़ीमत पर प्रतिष्ठा की सुरक्षा नहीं’

मीटू के आरोप पर मानहानि मामले में अदालत ने पूर्व केंद्रीय मंत्री के ख़िलाफ़ सुनाया फ़ैसला

अलका आर्य

भाजपा के नेता, मोदी सरकार के पूर्व विदेश राज्य मंत्री व पत्रकार एम.जे. अकबर को 17 फरवरी को दिल्ली की एक अदालत से मानहानि से जुड़े एक फ़ैसले में बड़ा झटका लगा। उनके मामले में अदालत ने साफ़ संदेश दे दिया कि किसी की प्रतिष्ठा की सुरक्षा किसी के सम्मान की क़ीमत पर नहीं की जा सकती है। समाज में ऊँचा दर्जा रखने वाला व्यक्ति भी यौन शोषण कर सकता है। दिल्ली की राउज एवेन्यू अदालत स्थित एडिशनल चीफ मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट रविंद्र कुमार पाण्डेय ने पूर्व केंद्रीय मंत्री व पत्रकार एम.जे. अकबर द्वारा दाख़िल आपराधिक मानहानि के मामले में पत्रकार प्रिया रमानी को बरी कर दिया। अकबर की शिकायत को ख़ारिज़ करते हुए अदालत ने कहा कि एक महिला को दशकों बाद भी अपनी शिकायत उचित मंच पर रखने का अधिकार है। यौन उत्पीड़न के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने के लिए महिलाओं को सज़ा नहीं दी जा सकती। दरअसल 91 पेज वाले इस फ़ैसले में उद्धृत उक्त पंक्ति से ख़ासतौर पर यौन उत्पीड़न की पीड़ित लड़कियों / महिलाओं को इंसाफ़ पाने की दिशा में एक नयी ताक़त मिलेगी। अब आरोपी ऐसी पीड़िताओं को उनके ख़िलाफ़ आपराधिक मानहानि की शिकायत दर्ज कराकर आसानी से चुप नहीं करा सकेंगे। फ़ैसला सुनाये जाने के बाद पत्रकार प्रिया रमानी की प्रतिक्रिया थी– ‘मेरी जीत से महिलाओं को खुलकर बोलने का हौंसला मिलेगा और ताक़तवर लोग पीड़ितों को अदालत में घसीटने से पहले दो बार सोचेंगे। मेरे सच को अदालत ने स्वीकार किया है, यह वास्तव में बड़ी बात है।’

अदालत के इस फ़ैसले के बाद अदालत परिसर में एक तरफ़ प्रिया रमानी को पत्रकारों ने घेर लिया और वह मुस्कुराकर महिलाओं की इस जीत के मायने बताती रहीं, तो दूसरी ओर एम.जे. अकबर, जो सिपाहियों की घेरेबन्दी में वहाँ मौजूद होकर अपनी ताक़त की अहसास करा रहे थे; फ़ैसले से निराश होकर चुपचाप वहाँ से खिसक लिये। दरअसल पत्रकार प्रिया रमानी ने 2017 में वोग इंडिया पत्रिका के लिए लिखे एक लेख में नौकरी के लिए साक्षात्कार के दौरान बॉस पर यौन उत्पीड़न का आरोप लगाया था। इस लेख में उन्होंने बॉस के नाम का ज़िक्र नहीं किया था। मगर एक साल बाद जब देश में मीटू आन्दोलन शुरू हुआ, तो 8 अक्टूबर, 2018 को प्रिया रमानी ने एक ट्वीट करके ख़ुलासा किया कि उत्पीड़न करने वाला व्यक्ति एम.जे. अकबर थे। मीटू आन्दोलन के तहत लड़कियाँ, महिलाएँ अपने यौन उत्पीड़न की व्यथा को सोशल मीडिया पर खुलकर व्यक्त कर रही थीं; यौन उत्पीड़न करने वालों के नामों का भी ख़ुलासा कर रही थीं। 15 अक्टूबर, 2018 यानी एक सप्ताह के बाद एम.जे. अकबर ने प्रिया रमानी के ख़िलाफ़ कथित तौर पर उन्हें बदनाम करने, उनकी छवि को धूमिल करने के लिए मानहानि की शिकायत दर्ज करायी। 17 अक्टूबर, 2018 को मीटू आरोपों से घिरे एम.जे. अकबर को मंत्री पद से इस्तीफ़ा देना पड़ा। मानहानि का यह मुक़दमा क़रीब सवा दो साल चला। इस दरमियान अदालत ने प्रिया रमानी व एम.जे. अकबर को मामले में समझौता करने का सुझाव दिया था। पत्रकार रमानी ने अदालत में 25 नवंबर, 2020 को अपना बचाव करते हुए कहा था कि वह अपने बयान पर क़ायम हैं और अकबर के साथ समझौता नहीं करेंगी। एम.जे. अकबर ने आरोप लगाया कि पत्रकार प्रिया रमानी ने जनहित में नहीं, बल्कि प्रतिशोध में उनकी छवि धूमिल करने के लिए यौन उत्पीड़न वाला बयान दिया। अकबर ने आरोपों को झूठा, बनावटी और व्यथित करने वाला बताया। इन आरोपों के ख़िलाफ़ प्रिया रमानी ने बड़ी मज़बूती से कहा कि उन्होंने जनहित में अकबर के ख़िलाफ़ अपने सच को सबके सामने रखा। रमानी इस बात पर अडिग रहीं कि उसके आरोप वास्तविक व सच्चे हैं। अदालत में रमानी ने यह भी कहा कि अकबर ने अपने ख़िलाफ़ शोषण के अनुभवों के बारे में बोलने वाली सभी महिलाओं में भय पैदा करने को उनके ख़िलाफ़ झूठे मुक़दमे दायर किये। रमानी ने अपने बयान के सच व वास्तविक होने का दावा करते हुए कहा था कि यौन दुर्व्यवहार का आरोपी उत्कृष्ट प्रतिष्ठा होने का दावा नहीं कर सकता। दोनों पक्षों की दलीलें सुनने के बाद अंतत: अदालत ने अपने फ़ैसले में कहा कि रमानी के ख़िलाफ़ मानहानि का कोई आरोप साबित नहीं किया जा सका, लिहाज़ा उन्हें बरी किया जाता है। इस फ़ैसले ने न सिर्फ़ प्रिया रमानी को राहत दी है, बल्कि यौन उत्पीड़न से पीड़ित लड़कियों और महिलाओं का हौसला भी बढ़ाया है। इससे साफ़ संदेश मिला है कि आरोपी कितना भी ताक़तवर क्यों न हो, लेकिन हिम्मत नहीं हारनी चाहिए। अदालत के इस अहम फ़ैसले में कहा गया है कि समाज में उत्कृष्ट दर्जा रखने वाला व्यक्ति भी यौन शोषण कर सकता है। यौन उत्पीड़न के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने वाली महिला को अवमानना के आपराधिक मुक़दमे में इसलिए सज़ा नहीं हो सकती, क्योंकि मामला किसी की प्रतिष्ठा से जुड़ा है। किसी व्यक्ति के प्रतिष्ठा के अधिकार की रक्षा किसी दूसरे के जीने के अधिकार और महिला के सम्मान की क़ीमत पर

नहीं की जा सकती है। समाज को समझना होगा कि महिलाओं पर यौन उत्पीड़न का कैसा असर होता है। इस तरह का उत्पीड़न गरिमा के ख़िलाफ़ है और आत्मविश्वास को ख़त्म कर देता है। इसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता कि यौन उत्पीड़न के कई मामले बन्द दरवाज़ों में होते हैं। पीड़ित कई बार नहीं समझ पाती कि उसके साथ क्या हुआ है? इसलिए महिलाओं को दशकों बाद भी किसी भी मंच पर अपनी शिकायत करने का अधिकार है। पीड़ित को यौन शोषण के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने के लिए दण्डित नहीं किया जा सकता। संविधान के अनुच्छेद-21 के तहत गरिमा के अधिकार को उद्धृत करने के साथ-साथ अनुच्छेद-13, 14 में समानता का भी ज़िक्र फ़ैसले में किया गया है। इसके अलावा जज ने फ़ैसले में रामायण और महाभारत का भी उल्लेख किया है। रामायण में सीता की मदद के लिए जटायु आगे आये थे। जब लक्ष्मण से भी सीता के बारे में बताने को कहा गया था, तो उन्होंने कहा था कि उनकी नज़र कभी सीता जी के पैरों से ऊपर ही नहीं गयी। भारतीय मूल्यों में महिलाओं के प्रति सम्मान का यह उदाहरण है। यह भी कहा कि महिलाओं के ख़िलाफ़ ऐसे देश में अपराध हो रहे हैं, जहाँ उनके सम्मान को लेकर रामायण और महाभारत जैसे ग्रन्थ लिखे जा चुके हों।

अदालत के इस फ़ैसले पर वकील राजेश का कहना है कि यह एक मशहूर व्यक्ति, वह भी पुरुष को झटका देने वाला फ़ैसला है। इससे

भारत में महिलाओं का कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न (निवारण, निषेध एवं निदान) अधिनियम-2013 बना। इसके तहत दफ़्तर में किसी महिला को अश्लील इशारे करना, यौन सम्बन्ध बनाने की माँग करना, पोर्नोग्राफी दिखाना, बिना सहमति के छूना आदि यौन उत्पीड़न माना गया है।

महिलाओं में हिम्मत बढ़ेगी और पीड़िता तथा औरत होने के नाते, जो ख़ामोशी उनके भीतर भय पैदा करती है, वह अपनी जगह से खिसकेगी। इस फ़ैसले ने महिलाओं के भीतर यौन उत्पीड़न के ख़िलाफ़ खुलकर बोलने की एक ताक़त प्रदान की है। मानहानि के मामले में बरी होने के बाद प्रिया रमानी ने कहा कि यौन उत्पीड़न के मामले में पीड़ित होने के बावजूद मैं अदालत में एक अभियुक्त के तौर पर खड़ी थी; लेकिन आज मुझे ख़ुशी है कि कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न मामले को जो तव्वजो मिलनी चाहिए, वो मिल रही है। भारत में महिलाओं के लिए आवाज़ उठाने वाले ट्वीटर समूह मीटू इंडिया ने ट्वीट किया है- 'हमने यह लड़ाई जीत ली है। अभी कहने के लिए शब्द नहीं हैं। बस आँखों में आँसू हैं। रोंगटे खड़े हो रहे हैं। सभी के साथ एकजुटता। हम प्रिया रमानी की हिम्मत के आभारी हैं।'

दरअसल इस मामले को महिला अधिकार समूह इसे महिलाओं की जीत के तौर पर देख रहे हैं। लेकिन इतिहास के पन्ने पलटें, तो पता चलता है कि महिलाओं को अपने अधिकार पाने के लिए लम्बा संघर्ष करना पड़ा और आज भी यह संघर्ष जारी है। कामकाजी महिलाओं एक मोर्चे पर समान काम, समान वेतन को लेकर संघर्षरत हैं, तो वहीं कार्यस्थलों पर संरक्षण को लेकर भी फ़िक्रमंद हैं। भारत में महिलाओं का कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न (निवारण, निषेध एवं निदान) अधिनियम-2013 बना। इसके तहत दफ़्तर में किसी महिला को अश्लील इशारे करना, यौन सम्बन्ध बनाने की माँग करना, पोर्नोग्राफी दिखाना, बिना सहमति के छूना आदि यौन उत्पीड़न माना गया है। इस अधिनियम में कार्य-स्थल पर यौन उत्पीड़न को रोकने की ज़िम्मेदारी नियोक्ता पर डाल दी गयी है। ऐसा करने में असफल साबित होने पर उसके लिए सज़ा का भी प्रावधान किया गया है। ध्यान देने वाली बात यह है कि यहाँ कार्य स्थल से मतलब सिर्फ़ कार्यालय ही नहीं है, बल्कि कार्यालय के काम से कहीं जाना, रास्ते का सफ़र, घर से काम करना आदि भी शामिल है। यहाँ पर कार्य स्थल के दायरे को बदलते वक़्त के साथ विस्तार दिया गया है। यह क़ानून सरकारी, निजी व असंगठित सभी क्षेत्रों पर लागू होता है। ज़मीन पर इसके असली अमल को लेकर कई सवाल व चुनौतियाँ अपनी जगह हैं। लेकिन यह भी सच है कि महिलाओं के पास एक विशेष क़ानून है, जो उन्हें ताक़तवर बनाता है। एचआर पेशेवर एक महिला का मानना है कि कम्पनियाँ अब इस क़ानून के प्रति गम्भीर नज़र आती हैं। उनकी कोशिश कार्यबल में विविधता लाने की है। कार्यालयों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने पर फोकस रहता है। इसके लिए ज़रूरी है कि कम्पनियाँ अपने यहाँ यौन उत्पीड़न के मामलों के प्रति ज़ीरो टॉलरेंस की नीति अपनाएँ।' वरिष्ठ वकील इंदिरा जयसिंह ने इस फ़ैसले को ऐतिहासिक क़रार देते हुए कहा कि इस फ़ैसले का सबसे अहम हिस्सा यही है कि अदालत ने एम.जे. अकबर की देर से की गयी यौन उत्पीड़न की शिकायत की दलील को नहीं माना। हो सकता है एम.जे. अकबर इस फ़ैसले के ख़िलाफ़ उच्च अदालत का दरवाज़ा खटखटाएँ और इसके अलावा इस फ़ैसले के कई किन्तु-परन्तु हों। फिर भी इस फ़ैसले का अपना महत्त्व है। तहलका

tehelkaletters@gmail.com

क्या महँगाई रोकने में लाचार है सरकार ?

खेत से बाज़ार तक आते-आते तीन से चार गुना तक बढ़ जाते हैं खाद्य पदार्थों के दाम

के. पी. मलिक

अभी दो दिन पहले हरियाणा के एक किसान ने अपनी खड़ी गोभी के खेत में ट्रैक्टर चलवा दिया। किसान ने रोते हुए बताया कि गोभी उगाने में उसकी कुल लागत 70 हज़ार रुपये आयी, अब मंडी में दो रुपये किलो गोभी के दाम मिल रहे हैं, जो कि ढुलाई की लागत भी नहीं है। इससे पहले मुज़फ़्फ़रनगर में भी एक किसान ने गोभी के खड़े खेत में ट्रैक्टर चलवा दिया। शहरों में गोभी 20 रुपये किलो बिक रही है। किसान से व्यापारी दो रुपये किलो ख़रीद रहे हैं। इसका मतलब यह है कि किसानों से कई गुना ज़्यादा कमायी बिचौलिये कर रहे हैं। नये कृषि क़ानूनों को समाप्त करने के लिए किसानों की लड़ाई इसी बात को लेकर है कि उनसे बहुत कम दामों में फ़सलें ख़रीदी जाती हैं और बाज़ार में आते-आते कम-से-कम उनका भाव तीन से चार गुना से लेकर 10 गुना तक बढ़ जाता है। पिछले दो साल से भारत में महँगाई एक बड़े आर्थिक संकट के रूप में हमारे सामने चुनौती बनी हुई है। आज देश में घरेलू बाज़ार की रोज़ाना और आवश्यक प्रयोग की अधिकतर चीज़ों के दाम आसमान छू रहे हैं। शहर हो या गाँव ग़रीबों और मज़दूरों के लिए दो जून की रोटी का जुगाड़ करना मुश्किल हो गया है। जहाँ कहा जाता है कि ग़रीब को दाल-रोटी मिल जाए, तो वह अपना पेट भर लेते हैं; लेकिन आज दाल की क़ीमत 100 रुपये प्रति किलो से अधिक होने के कारण दाल भी ग़रीब की थाली से ग़ायब हो चुकी है। ऐसे में ग़रीब व्यक्ति दाल भी नहीं खा सकता है। केंद्र और राज्य सरकारों का दाम बढ़ाने की योजनाओं पर कोई नियंत्रण नहीं है। सरकारें योजनाएँ तो बना देती हैं, लेकिन उन्हें पूर्ण रूप से लागू करने मे असमर्थ ही दिखती हैं। यही वजह है कि सरकारों की तय राशि का फ़ायदा ज़रूरतमंद और ग़रीब को जितना मिलना चाहिए, उतना नहीं मिल पाता।

हाल ही में वित्तीय वर्ष 2021-22 के लिए संसद में पेश बजट के बाद लोगों की नज़र इस ओर गयी है कि महँगाई बढ़ेगी या नहीं। पाँच कृषि सम्बन्धी वस्तुओं पर सेस लगने से महँगाई बढ़ेगी, भले ही सरकार कुछ भी कहे। डीजल और पेट्रोल के लगातार बढ़ते दाम इसका सबसे बड़ा उदाहरण हैं। इन दिनों देश के कई शहरों में डीजल 90 रुपये के पार और पेट्रोल 100 रुपये के पार पहुँच चुका है। पेट्रोल व डीजल के बढ़ते दामों को देखते हुए देश के पाँच राज्यों- पश्चिम बंगाल, राजस्थान, असम, नागालैंड और मेघालय ने इन पर लगने वाला कर (टैक्स) कम किया है। इससे पहले दिल्ली सरकार पेट्रोल और डीजल पर कर घटा चुकी है। लेकिन सवाल यह है कि चरमराती अर्थ-व्यवस्था, गिरती जीडीपी और केंद्र सरकार द्वारा लगातार बढ़ाये जा रहे तेल, गैस दामों और टैक्स बढ़ाने के बावजूद राज्य सरकारें कहाँ-कहाँ और किस-किस चीज़ की महँगाई कम करेंगी ?

समस्या यह है कि जब कोई फ़सल किसानों के खेत से उठकार आती है, तो उसके भाव बहुत कम रखे जाते हैं और व्यापारी उसे कौड़ी भाव में ख़रीदते हैं। लेकिन जैसे ही किसानों के पास से उठकर वह जमाख़ोरों के पास इकट्ठी हो

जाती है, तभी उसके भाव आसमान छूने लगते हैं। इसका मतलब साफ़ है कि किसानों को एक साज़िश के तहत ठगा जाता है और उसके बाद में उपभोक्ताओं को भी लूटा जाता है। दु:ख इस बात का होता है कि जो सब्ज़ी किसानों से 50 पैसे प्रति किलो से लेकर अधिक-से-अधिक दो रुपये प्रति किलो ख़रीदी जाती है, वही सब्ज़ी व्यापारियों के हाथ लगने के बाद 20 रुपये प्रति किलो से लेकर 60 रुपये प्रति किलो तक बिकती है। सही मायने में अगर देखा जाये, तो तीन नये कृषि क़ानूनों के ख़िलाफ़ किसानों की असल लड़ाई उनकी ज़मीन बचाने के साथ-साथ महँगाई बढ़ने से रोकने के लिए भी है। इस बात को भले ही अभी बहुत-से लोग नहीं समझ रहे हैं, लेकिन समय आने पर सभी समझेंगे।

भारत में तमाम राजनीतिक दल ग़रीबी और महँगाई को चुनावी मुद्दा बनाकर हर पाँच साल में वोट बटोरते हैं। लेकिन सत्ता में आने के बाद न तो कोई दल महँगाई ख़त्म करने की दिशा में काम करता है और न ही ग़रीबी ख़त्म करने की दिशा में। मेरा मानना है कि भारत में महँगाई बढ़ने के मुख्य कारण लगातार बढ़ती जनसंख्या, हर जगह भ्रष्टाचार, बेरोज़गारी, बीमारियाँ, लगातार बढ़ते कर के बोझ और किसानों की दिन-ब-दिन ख़राब होती दशा आदि हैं। लेकिन सरकारों को इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि इन स्थितियों से न पिनटने के चलते महँगाई और

दिसंबर, 2020 में सरकार द्वारा पेश महँगाई दर के आँकड़ों में कहा गया था कि महँगाई दर कम हुई है।

बढ़ती रहेगी। केंद्र और राज्य सरकारों इस बात को भी नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए कि भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहाँ ज़मीन से जुड़े मुद्दों को दरकिनार कर मंदी और महँगाई से नहीं निपटा जा सकता। सबसे बड़ी दिक़्क़त यह है कि देश पर एक के बाद एक कई संकट आते जा रहे हैं, जिससे महँगाई और भी बढ़ती जा रही है। मेरे ख़याल से मौजूदा सरकार को यह नहीं भूलना चाहिए कि केवल प्याज, आलू और दालों के दाम लगातार बढ़ने के चलते अटल बिहारी वाजपेई की सरकार गिर गयी थी। फिर यहाँ तो लोगों के पास सरकार के ख़िलाफ़ महँगाई के अलावा भी कई ऐसे मुद्दे हैं, जिन्हें लेकर उनमें सरकार ही नहीं, प्रधानमंत्री तक के ख़िलाफ़ आक्रोश-सा पनप रहा है। एक तरफ़ सरकार आत्मनिर्भर होने की बात कहती है, वहीं दूसरी तरफ़ लोगों पर हर तरह से बोझ बढ़ता जा रहा है। ऊपर से लोगों के पास काम-धन्धा नहीं है। मेरा सवाल यह है कि जब लोगों के पास काम-धन्धा ही नहीं होगा, रोज़गार नहीं होगा और महँगाई बढ़ती जाएगी, तो क्या समाज में भुखमरी, चोरी-चकारी, लूट-खसोट और आत्महत्या की प्रवृत्ति नहीं बढ़ेगी। महँगाई एक ऐसी चीज़ है, जो ग़रीबों को दूर, मध्यम वर्गीय परिवारों को भी बेहद परेशान कर देती है।

मौजूदा मोदी सरकार और देश की सभी राज्य सरकारों को भी याद रखना चाहिए कि 2008-9 में वैश्विक मंदी की मार ने बड़े-बड़े देशों को घुटनों के बल ला दिया था। मंदी से निपटने के लिए भारत सरकार ने एक बड़ी रक़म ख़जाने से निकाल ली थी। अर्थशास्त्री कहते हैं कि जब-जब बाज़ार में ज़्यादा रक़म डाली जाती है, तब-तब महँगाई बढ़ती है। पिछले दशक यानी 2008-09 में महँगाई इसी वजह से बढ़ी थी, क्योंकि सरकार ने खुले हाथों से ख़र्चे क्ये थे। आज मोदी सरकार तो तमाम चीज़ों पर जमकर ख़र्च कर रही है, भले ही इससे जनता को सीधे फ़ायदा न पहुँच रहा हो। ऐसे में आने वाले समय में महँगाई बढ़ेगी-ही-बढ़ेगी, इसमें कोई दो-राय नहीं। मंदी से निपटने के लिए सरकार उत्पादन बढ़ाने पर ज़ोर दे चुकी है, लेकिन उद्योग बढ़ाने की उसकी कोशिशें नाकाम रही हैं। साइकिल की एटलस जैसी स्वदेशी कम्पनी बन्द हो जाना इसका एक उदाहरण है। अर्थशास्त्र कहता है कि माँग तब बढ़ती है, जब उपभोक्ताओं की जेब में पैसा होता है। लेकिन जेब ख़ाली हो, तो न केवल महँगाई बढ़ती है, बल्कि देश का राजस्व भी घटता है, क्योंकि इससे व्यापार कमज़ोर होता है। आजकल देश में उद्योग धन्धे भी मंदी की वजह से कम उत्पादन और कम ख़पत कर पा रहे हैं, जिससे लोगों के पास रोज़गार ही नहीं है। ऐसे में सरकार को उद्योग धन्धों को बढ़ावा देना चाहिए, ताकि लोगों को रोज़गार मिल सके और महँगाई पर भी ज़्यादा नहीं, तो कुछ हद तक ही सही, क़ाबू पाया जा सके। लेकिन सरकार ऐसा नहीं कर पा रही है। पेट्रोल व डीजल की बढ़ती क़ीमतों को रोकने में सरकार ख़ुद को असमर्थ बता चुकी है। सवाल यह उठता है कि क्या सरकार महँगाई रोकने में नाकाम है?

दिसंबर, 2020 में सरकार द्वारा पेश महँगाई दर के आँकड़ों में कहा गया था कि महँगाई दर कम हुई है। लेकिन अगर आम आदमी की हालत देखें और मंडियों का रुख़ करें, तो पता चलता है कि हर कोई महँगाई से रोता नज़र आ रहा है। परेशान करने वाली बात यह है कि मौजूदा प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अपने पहले कार्यकाल के दौरान से महँगाई कम करने का वादा करते आ रहे हैं। उन्होंने अपने पहले लोकसभा चुनाव में भी महँगाई और ग़रीबी को सबसे बड़े हथियार के रूप में इस्तेमाल किया था। पहले लोगों को भरोसा हुआ कि उनके सत्ता में आने के बाद महँगाई कम होगी, फिर लोगों ने सोचा कि मेक इन इंडिया और स्टार्ट अप इंडिया जैसी योजनाएँ महँगाई कम करने में सहयोगी होंगी, यह भी नहीं हुआ। फिर लोगों ने सोचा कि नोटबन्दी से कालाधन वापस आयेगा और उन्हें रोज़गार मिलेगा, उनकी आय बढ़ेगी, जिससे महँगाई कम होगी। इसके बाद लोगों ने सोचा कि एक कार्यकाल में सरकार कुछ नहीं कर सकी, इसलिए अब दूसरे कार्यकाल में वोट दें, ताकि उसे विकास करने के लिए पाँच साल और मिल जाएँ। इसी बीच एक साल बाद कोरोना वायरस कहर बनकर टूट पड़ा और लाखों लोगों का रोज़गार चला गया, उद्योग धन्धे चौपट हो गये। अब लोग परेशान नज़र आने लगे हैं और सरकार से महँगाई तथा बेरोज़गारी को लेकर सवाल कर रहे हैं। मेरा मानना है कि डीजल तथा पेट्रोल के दाम कम करके महँगाई कम करने का रास्ता खोलना चाहिए, नहीं तो देश में बढ़ती महँगाई पर लग़ाम कसना मुश्किल हो जाएगा। तहलका

(लेखक दैनिक भास्कर के राजनीति संपादक हैं।)
tehelkaletters@gmail.com

जनता की पहुँच से दूर होते जन-प्रतिनिधि

सुनील कुमार

इस बार गणतंत्र दिवस पर जो हुआ, उसकी हर जगह निंदा हुई। तिरंगे के अपमान का मतलब है- देशद्रोह। लेकिन कई बार देखा जाता है कि जन-प्रतिनिधि भी अपने कर्तव्यों से विमुख रहते हैं। हमारा देश लोकतांत्रिक देश है। यहाँ हर नेता-मंत्री जन-प्रतिनिधि होता है और जन-कल्याण, जन-सेवा तथा देश-सेवा के लिए ही होता है। लेकिन अब इनमें से अधिकतर जन-प्रतिनिधि निजी स्वार्थ के लिए राजनीति के क्षेत्र में उतरने लगे हैं। यही वजह है कि इन जन-प्रतिनिधियों के पास बहुत कम समय में करोड़ों की सम्पत्ति जमा हो जाती है। दरअसल अधिकतर ग़लत तरीक़े से धन की यही आवक और जन-प्रनिधियों की दिन-ब-दिन बढ़ती धन-लिप्सा इनको सेवा भाव से विरक्त करती जा रही है। बेतरतीब सम्पत्ति, पैसे और पद का घमण्ड और आम लोगों द्वारा ज़रूरत से ज़्यादा मान-सम्मान इन जन-प्रतिनिधियों को अहंकारी बना रहा है। इसी अहंकार की वजह से आजकल के अधिकतर जन-प्रतिनिधि सुरक्षा और व्यस्तता का बहाना लेकर जनता की पहुँच से दूर हो जा रहे हैं और अपनी ज़िम्मेदारियों से मुँह फेरने लगे हैं। इस मुँह फेरने की एक वजह यह भी है कि एक आम आदमी इन पर आसानी से दबाव नहीं बना पाता, न ही वह इनकी अवहेलना, कामचोरी और ढीठता के ख़िलाफ़ शिकायत कर पाता है। क्योंकि इनके ख़िलाफ़ जल्द कोई कार्रवाई ही नहीं होती। जिनता बड़ा जन-प्रतिनिधि, उतने ही उसके नख़रे और उतनी ही जनता की उस तक पहुँच कम। है न ताज्जुब की बात। क्योंकि जन-प्रतिनिधि कितना भी बड़ा हो जाए, उसे जन मानस के लिए सुलभ होना चाहिए। अगर क़ानून की बात की जाए, तो कहा भी गया है कि देश से बढ़कर कोई नहीं, इसीलिए क़ानून सबके लिए बराबर है। लेकिन अब मुँह देखी पंचायत वाली स्थिति है।

'क़ानून से ऊपर नहीं माननीय'

कुछ साल पहले सुप्रीम कोर्ट ने दो टूक कहा था कि माननीय क़ानून से ऊपर नहीं हैं। सुप्रीम कोर्ट ने कहा था कि माननीयों को दिये गये विशेषाधिकार केवल सदन की कार्यवाही सुचारू तरीक़े से चलाने के लिए हैं और सदन के बाहर हुई गतिविधियों में उन्हें कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है। सुप्रीम कोर्ट ने कहा था कि संसद के दोनों सदनों के सदस्यों पर सभी क़ानून आम नागरिकों की तरह ही लागू होते हैं और किसी भी व्यक्ति को आपराधिक मुक़दमे से छूट नहीं मिल सकती। यह फ़ैसला सुप्रीम कोर्ट ने सने 2007 में मध्य प्रदेश विधानसभा में तत्कालीन लोकायुक्त जस्टिस रिपुसूदन दयाल के ख़िलाफ़ जारी विशेषाधिकार हनन नोटिस को रद्द करते हुए दिया था। कोर्ट ने कहा है कि लोकायुक्त क़ानून, भ्रष्टाचार निरोधक क़ानून-1988 व मध्य प्रदेश स्पेशल पुलिस स्टैब्लिशमेंट स्पीकर व डिप्टी स्पीकर को छोड़कर विधानसभा के सभी लोकसेवकों पर लागू होता है। सुप्रीम कोर्ट ने क़ानून का हवाला देते हुए कहा था कि सीआरपीसी की धारा-39(1)(3) के तहत सभी नागरिकों की ज़िम्मेदारी है कि जानकारी में आये संज्ञेय अपराध की सूचना पुलिस को देगा और जाँच में पूरा सहयोग करेगा। सदन के सदस्यों को प्राप्त विशेषाधिकार के बारे में विभिन्न कमेटियों की रिपोर्टों और कोर्ट के पूर्व फ़ैसलों का हवाला देते हुए सुप्रीम कोर्ट ने कहा था कि विशेषाधिकार वो अधिकार हैं, जिनके बिना सदन अपनी विधायी कार्यवाही नहीं चला सकता, उनका इस्तेमाल निजी स्वार्थ अथवा निजी बचाव अथवा निजी हित के लिए नहीं किया जा सकता।

किंकर्तव्य विमूढ़ों की हो छुट्टी

वैसे तो किसी मंत्री अथवा सांसद को सभासद निलंबित कर सकता है, लेकिन ऐसा बहुत ही कम होता है। लेकिन इसके लिए क़ानून बनना चाहिए कि अगर कोई जन-प्रतिनिधि चुनकर संसद में

या किसी राज्य की विधानसभा में आये और वह अपने कर्तव्यों से विमुख हो, तो उसकी छुट्टी होनी चाहिए। ऐसे लोगों के निलंबन से किंकर्तव्य विमूढ़ों के मन में एक डर बैठेगा और उन्हें अपनी ज़िम्मेदारी का अहसास होगा।

जनता की बड़ी भूल

भारत एक ऐसा देश है, जहाँ अनेक जातियों और धर्मों के मानने वाले रहते हैं। यही वजह है कि अधिकतर लोग यहाँ जाति और धर्म देखकर ही कोई फ़ैसला लेते हैं। इसी वजह से लोग कोई फ़ैसला लेने से लेकर जन-प्रतिनिधियों के चुनाव तक में कर डालते हैं और बाद में उन्हें इसका ख़ामियाज़ा भुगतना पड़ता है। हैरानी की बात यह है कि अधिकतर लोग देश और अपने कल्याण के बारे में सोचे बग़ैर जातिवाद, धर्मवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद के चक्कर में फँसकर आपराधिक प्रवृत्ति से जुड़े लोगों को चुन लेते हैं। हाल ही में आयी एडीआर की एक रिपोर्ट कहती है कि 2009 से 2019 तक महिलाओं के ख़िलाफ़ अपराध के घोषित मामलों में केवल लोकसभा में 850 फ़ीसदी सांसदों की वृद्धि हुई थी। वहीं लोकसभा चुनावों में महिलाओं के ख़िलाफ़ अपराध के घोषित मामलों के साथ उम्मीदवारों की संख्या में 231 फ़ीसदी की वृद्धि हुई थी। आज देश भर में अपराधी मंत्रियों की भरमार है।

लोगों की लुटने-पिटने की पड़ चुकी आदत

अपने अधिकारों और कर्तव्यों से अनजान होने की वजह से आम लोगों में यह प्रवृत्ति घर कर चुकी है कि उनका नसीब ख़राब है, जबकि ऐसा नहीं है। ख़ुद ग़लत प्रतिनिधियों को चुनकर लोग बेतरतीब टैक्स के बोझ के नीचे दबकर कुछ दिन चिल्लाते हैं, उन्हीं प्रतिनिधियों को गालियाँ देते हैं और यह भी कहते जाते हैं कि राजनीति में सब जायज़ है। दरअसल यह जुमला जन-प्रतिनिधियों ने ही इसी लिए ईजाद किया है, ताकि लोगों में ग़लत जन-प्रतिनिधियों का विरोध न करें और उन्हें ज़ुल्म सहने की आदत पड़ सके। वास्तव में यह आदत लोगों को पड़ भी चुकी है और इसकी दो वजह हैं। एक, लोगों को संविधान का ठीक से ज्ञान नहीं है और दूसरा लोग निजी स्वार्थ से ऊपर कुछ नहीं सोचते।

कोई नहीं माँगता हिसाब

अधिकतर लोगों को यह मालूम ही नहीं होता कि उनके द्वारा चुने गये जन-प्रतिनिधियों के क्या-क्या कर्तव्य हैं। न ही कोई अपने क्षेत्र के जन-प्रतिनिधियों से हिसाब माँगता है। न ही अधिकतर लोग यह जानते हैं कि किस स्तर के जन-प्रतिनिधि के पास साल में विकास कार्यों के लिए कितना बजट आता है। वास्तव में यह बजट इतना होता है कि अगर हर चुना गया जन-प्रतिनिधि ईमानदारी से अपने क्षेत्र में काम करे, तो हर गाँव, हर क़स्बा और हर शहर चमक उठेगा और लोग ख़ुशहाल जीवन जीने लगेंगे।

नीचे से ऊपर तक भ्रष्टाचार

भारत वर्ष को सोने की चिड़िया कहा जाता है। यह कोई कहावत नहीं है, बल्कि यह देश वाक़ई सोने की चिड़िया है, अन्यथा इसे लगभग 2000 साल तक देशी-विदेशी ताक़तों ने लूटा नहीं होता। आज अगर विदेशी लुटेरों से देश बचा हुआ है, तो नीचे से ऊपर तक भ्रष्टाचारी पूरे देश को दीमक की तरह चट कर रहे हैं। यही वजह है कि यहाँ आम जन मानस लगातार परेशानियों में फँसता जा रहा है, उस पर टैक्स का बोझ बढ़ता जा रहा है और ग़रीबी बढ़ती जा रही है।

ताक़त के नशे में भूल जाते हैं शिष्टाचार

हम लोगों ने कितने ही जन-प्रतिनिधियों को ताक़त के नशे में अभद्रता करते पाया होगा, देखा होगा। इसकी वजह यह है कि अधिकतर जन-प्रतिनिधि सांसद या विधायक चुने जाने के बाद ताक़त के नशे में चूर हो जाते हैं और शिष्टाचार भूलकर अहंकारी होकर फ़ैसले करते हैं। इसी वजह से बहुत-से जन-प्रतिनिधि ख़ुद तो ग़लत फ़ैसले करते ही हैं, अपने अधीनस्थ कर्मचारियों और अधिकारियों को भी ग़लत करने पर मजबूर करते हैं। इसकी वजह यह भी है कि अगर किसी जन-प्रतिनिधि पर कोई आपराधिक मामला दर्ज भी होता है और उसे सज़ा भी सुनायी जाती है, तो भी उसे या तो सज़ा मिलती ही नहीं है, अथवा सज़ा पूरी होने से पहले उसे जमानत मिल जाती है और वह फिर से चुनाव लड़ने के लिए योग्य माना जाता है। पिछले कुछ वर्षों में ऐसे कई मामले देखने में आये हैं।

सही चुनाव की ज़रूरत

इस मामले में हम भारतवासियों को विकसित देशों से सीखने की ज़रूरत है। हाल ही के अमेरिका के चुनावों से सीख लेने की ज़रूरत है। अगर सभी देशवासी केवल देशहित और अपने बच्चों के भविष्य को ध्यान में रखते हुए जन-प्रतिनिधि चुनें, तो अधिकतर सही लोगों का चुनाव हो सकता है। अगर सही और ईमानदार जन-प्रतिनिधि चुने जाएँगे, तो वे देशहित और जनहित की चिन्ता करेंगे।

कैसे सुधरेंगे हालात

हममें से अधिकतर लोग अपने हित के लिए थोड़ा-बहुत ग़लत करने से पीछे नहीं हटते। यही वजह है कि जब हमारे सामने कुछ भी ग़लत होता, तो हममें उसका विरोध करने की ताक़त नहीं होती। जैसे अगर कोई हमसे रिश्वत माँगता है, तो हम अपना काम निकलवाने के चक्कर में उसे रिश्वत दे देते हैं। अगर हम वहाँ पर रिश्वत माँगने वाले का विरोध करें, तो भ्रष्टाचार पर प्रतिबन्ध लगने में मदद मिलेगी। इसके लिए हमें ख़ुद भी पूरी तरह ईमानदार बनना होगा। यदि हम ऐसा कर सके, तो हमारे बच्चे भी ईमानदार बन सकेंगे। धीरे-धीरे हम अधिकतर लोगों की प्रेरणा बनने लगेंगे और लोग ईमानदार होते जाएँगे। लेकिन इसके लिए हम सबको सबसे पहले अपने स्वार्थ को पूरी तरह छोड़ना होगा, लालच का त्याग करना होगा। आमजन को किसी भी ग़लत व्यक्ति के विरुद्ध आवाज़ उठानी होगी। अगर ऐसा हो गया, तो देश का हर जन-प्रतिनिधि आम जन मानस के क़रीब आता जाएगा और उनके प्रति ईमानदार रहकर अपने कर्तव्यों का पूरी तरह पालन करेगा।

tehelkaletters@gmail.com

और बढ़ा गहलोत का रुतबा

विजय माथुर

सचिन पायलट ने अगर रूठने और मुँह फुलाने की राजनीति का धारदार हथियार नहीं थामा होता, तो राहुल गाँधी की हालिया राजस्थान यात्रा के दौरान प्रोटोकॉल में उन्हें ख़ारिज नहीं किया जाता। राहुल गाँधी की यात्रा के परिदृश्य में सचिन पायलट क्रिकेट टीम के 12वें खिलाड़ी की उपेक्षित भूमिका में नज़र आये। जबकि राहुल गाँधी की सन्निकटता के साथ मुख्यमंत्री अशोक गहलोत का नेतृत्व और सियासी धमक साफ़ नज़र आयी। मोदी सरकार पर गरमागरम शब्द-बाण दाग़ते हुए राहुल गाँधी का भाषण सिर्फ़ किसानों पर ही केंद्रित रहा। उन्होंने विषाद से घिरे से पायलट को तवज्जो देने की क़तई कोई ज़हमत नहीं उठायी। राहुल की गुफ़्तगू सिर्फ़ गहलोत तक ही सिमटकर रह गयी। दिग्गज राजनीतिज्ञों ने भी स्वीकार किया कि पूरे आयोजन में राहुल की सन्निकटता के समय गहलोत छाये रहे और सारे पत्ते उन्हीं के हाथ में रहे। राहुल ने पायलट के घावों पर मरहम लगाने की रस्मी कोशिश भी नहीं की। तटस्थ पर्यवेक्षकों का भी कहना था कि राहुल की राजस्थान यात्रा के बाद गहलोत की लोकप्रियता में भारी इज़ाफ़ा हुआ है।

जानकार सूत्रों का कहना है कि एक बार फिर राजस्थान की कांग्रेस राजनीति ने अप्रत्याशित मोड़ ले लिया है। ख़ासकर तब, जब पायलट गुट में यह अहसास मज़बूत होने लगा था कि राहुल की यात्रा के बाद मंत्रिमण्डल में विस्तार और राजनीतिक नियुक्तियाँ गहलोत की बाध्यता होगी। लेकिन इसके विपरीत सत्ता संतुलन की चाबी गहलोत के हाथ में आ गयी। राहुल का समर्थन मिल जाने से गहलोत की उम्मीदों को बल मिला है। अब वह सुविधा के साथ राजनीतिक नियुक्तियाँ कर सकेंगे। बहरहाल सूत्रों की मानें, तो पायलट कथित न्यूज एजेंसियों के ज़रिये छद्म लड़ाई में जुटे हैं। उधर गहलोत के भाषणों का स्वर तीखा और शैली आक्रामक हो गयी है। अलबत्ता उनका कहना है कि जल्द ही संगठन से चर्चा पूरी हो जाएगी, राजनीतिक नियुक्तियों का इंतज़ार भी ख़त्म हो जाएगा। गहलोत के कुशल प्रबन्धन की बात करें, तो कोरोना महामारी प्रबन्धन में प्रदेश आगे रहा। भीलवाड़ा और रामगंज मॉडल को देश भर में सराहना मिली। गुर्जर आन्दोलन की लपटें भी उठीं। लेकिन गहलोत ने बड़े करिश्माई तरीक़े से आन्दोलनकारियों के वार्ता कर आग भड़कने से पहले ही ठण्डा कर दिया। सचिन पायलट के साथ विधायकों की बग़ावत का तनावपूर्ण ड्रामा झेलना गहलोत के लिए सबसे बड़ी अग्नि परीक्षा थी। बग़ावत की हवा निकालने में उन्होंने कोई क़सर नहीं छोड़ी। सरकार को स्थिर और मज़बूत रखने की क़वायद में जुटे गहलोत कहते नहीं अघाते कि लड़ाई अभी ख़त्म नहीं हुई। भाजपा फिर सरकार गिराने की कोशिश में है; लेकिन भाजपा के मंसूबे पूरे नहीं होंगे। राजनीतिक पंडितों का मानना है कि जब जब सरकार या कांग्रेस में कोई सियासी क़दम उठाये जाएँगे, तब तब संकट की आहट सुनायी देगी। विश्लेषकों की मानें, तो आज नेता ख़रीदे जाते हैं और उनकी आत्मा की तलछट में इतनी ईमानदारी भी नहीं बची रहती कि नैतिकता के प्रति निष्ठावान बने रह सकें। ख़रीदने-बेचने के प्रबल आग्रह की राजनीति में अगर कोई शीशम का दरख़्त बना रह सकता है, तो इस पांत में अकेले अशोक गहलोत खड़े नज़र आते हैं। ऐसे में अंदेशों की कोपलें उगेंगी भी तो कैसे?

विश्लेषकों की मानें, तो मुख्यमंत्री पद की तीसरी पारी खेल रहे गहलोत को किसी गर्वीली चेतावनी की ज़रूरत नहीं है। उनके पास इतना अनुभव है कि अपनी समझ और फ़ैसलों पर गर्व कर सकते हैं। यह उनकी रहस्यमय राजनीतिक गिज़ा का ही कौशल है कि वह हर संकट से लड़े और बाकमाल जीत हासिल की। बिखरे हुए अवशेषों ओर बेजा उम्मीदों की नुमाया होती मुश्किलों के बीच यह गहलोत का ही दम था कि वह दो मोर्चों पर एक साथ लड़ रहे थे। एक तरफ़ सियासी संकट, तो दूसरी तरफ़ कोरोना; जहाँ हर शख़्स की चिन्ता नक़ाब के पीछे थर्रा रही थी। गहलोत कहते हैं कि कोरोना प्रबन्धन में हमने कोई चूक नहीं होने दी। यही वजह रही कि राजस्थान कोरोना प्रबन्धन में देश भर में मॉडल बनकर उभरा। गहलोत कहते हैं कि ऐसे नाजुक दौर में भाजपा धनबल और बाहुबल के बूते सरकार गिराने का खेल खेल रही थी।

विश्लेषकों का कहना है कि रेतीली राजनीति के जिस प्रदेश में कांग्रेस सरकार को आरूढ़ हुए साल भर भी नहीं बीता था और सरकार के आँगन में बेतहाशा ख़ुशियाँ सरसरा रही थीं, उस गुलाबी फ़िज़ाँ में लोगों ने राजनीति का अविश्वसनीय भ्रष्टाचार देखा। लोकतंत्र के रखवालों की नुचती नक़ाबों के बीच जो चेहरे सामने आये, वे धूर्त, पाखंडी और लालची निकले। विश्लेषकों का कहना है कि इस लड़ाई में पूरे देश ने गहलोत की योग्यता, क्षमता और अनुभव को देखा। उन्होंने कांग्रेस की अंदरूनी लड़ाई को सचिन पायलट से बाहर निकालकर सीधे गहलोत बनाम भाजपा बना दिया। गहलोत का सन्देश साफ़ था कि भाजपा के मज़बूत और

निष्ठुर तंत्र को वह ही हरा सकते हैं। खेल के अन्त में मुँह की खाने पर भाजपा को ही बाड़ेबन्दी की माँद में सिर छिपाना पड़ा। जबकि सरकार बचाकर विरोधियों को बाँटने की कूटनीतिक कामयाबी से गहलोत का चेहरा चमक उठा। दूसरा, सचिन के साथ जो गये, सो गये; लेकिन गहलोत के साथ 100 से अधिक विधायक टूटे नहीं। यहाँ गहलोत की जादूगरी क़ायम रही। गहलोत की क़िलेबन्दी कामयाब रही और दुश्मनों के सारे क़िले ढह गये। सियासत के बाज़ीगर गहलोत ने सचिन को ताज़िन्दगी याद रखने का सबक़ सिखा दिया कि राजनीति के माया संसार में वादों के लुभावने टुकड़ों से महत्त्वाकांक्षा का पेट कितने दिनों तक भरेगा? दिलचस्प हक़ीक़त है कि राजनीति के महाबली योद्धा गहलोत ने सचिन की सियासी छवि को एक ख़ास साँचे में समेट दिया। सचिन इन साँचों को कभी तोड़ पाएँगे, लगता ही नहीं। पर राजनीति की वक्र रेखाएँ इतनी सीधी नहीं कि सम्बन्ध, मतभेद और प्रतिशोध के निशान सचिन के आने वाले दिनों की चमक पर ग्रहण की तरह बने रहेंगे। गहलोत ने सचिन को सबसे बड़ी नसीहत दे दी कि वक़्त की मार को डिब्बे में बन्द नहीं कर सकते।

विश्लेषकों की मानें, तो गहलोत की राजनीति प्रभावोत्पादक दस्तावेज़ की तरह है। राज्य में कमल के खेल की विफलता पर तंज कसने की कूटनीति को दरकिनार करते हुए उन्होंने कहा कि लोकतंत्र में किसी की हार-जीत की बात नहीं है। उद्देश्य, सिद्धांत, नीतियाँ और कार्यक्रम क्या है? हमें उस पर सोचना चाहिए और ये सब कांग्रेस के पक्ष में हैं। लोकतंत्र बचाने के लिए हम और पूरा प्रदेश एक रहेगा। मौजूदा राजनीतिक फ़िज़ाँ में अगर किसी बड़े किसी बड़े सवाल की कुलबुलाहट है, तो फ़िलहाल अनुत्तरित भी है कि क्या चालू वर्ष में भी सियासी संकट रहेगा। माना जा रहा है कि जब-जब सरकार या कांग्रेस में सियासी क़दम उठाये जाएँगे, तब संकट की आहट सुनायी देगी। लेकिन सूत्रों का कहना है कि गहलोत की सियासी जादूगरी की धार इतनी आसानी से कुन्द नहीं होने वाली। अलबत्ता चुनौती तो है ही। अशोक गहलोत को उनकी मौजूदा कुर्सी पर पहुँचने में तीन बातों की मुख्य भूमिका रही है। पहली, उन्होंने विधान सभा चुनावों में तत्कालीन भाजपा मुख्यमंत्री वसुंधरा राजे के नकारात्मक स्वभाव को भरपूर भुनाया। दूसरी, अपनी ही पार्टी के पुरोधाओं के प्रति उनकी दबंगई की प्रत्यंचा बनाकर उन्हीं पर बाण वर्षा कर दी। मनोविज्ञान के प्रोफेसर और अपने निकटतम प्रतिद्वंद्वी सी.पी. जोशी के दावे दरकिनार करते हुए मनोवैज्ञानिक रूप उन्हें परास्त कर दिया। तीसरी, अपने दम पर आगे बढ़ने की चाहत ने जो चमत्कार दिखाया, उसने उन्हें जादूगर के रूप में स्थापित कर दिया। उन्होंने द्वंद्व की बजाय सृजन में निवेश किया। नतीजतन पार्टी अध्यक्ष सोनिया गाँधी से अपनी सरकार के लिए क्लीन चिट की गेंद लपक ली। जबकि उनके धुरविरोधी कामना कर रहे थे कि सोनिया गाँधी का रुख़ गहलोत सरकार की शव यात्रा में तब्दील हो। नेतृत्व परिवर्तन की अफ़वाहों की काली घटाएँ सोनिया गाँधी के चुनिंदा शब्दों के साथ ही छितरा गयीं कि छोटी-मोटी शिकायतों को दूर किया जाएगा; लेकिन सरकार ने अच्छा बंदोबस्त किया है। हालाँकि गहलोत सरकार को क्लीन चिट से विरोधी बुरी तरह कुढ़ गये हैं। अफ़सोस में बँटा इनका हर टुकड़ा अपने आपमें तल्ख़ हो रहा है।

लोकतांत्रिक राजनीति की एक अहम सच्चाई पर ग़ौर किया जाना चाहिए कि जब कोई काम करने वाली सरकार को स्थापित ज़मीनी सिद्धांतों को डिगाने का प्रयास करता है, तो सरकार और मज़बूत होती है तथा एक नयी इबारत लिख देती है। राजनीतिज्ञों की मानें, तो अब विरोधियों के लिए नये हथकंडों की कोई गुंजाइश नहीं बची है। हर मौक़े पर शुरुआती तक़रीर ने नेतृत्व परिवर्तन की माँग कूड़ेदान में पहुँचायी है और उनकी चालें तार-तार हो चुकी हैं। शेक्सपीयर ने कहा था कि जब कोई फ़रेब करने निकलता है, तो अपनी समझ में बहुत पेचीदा जाल बुन लेता है; लेकिन उसका हश्र तो सबको पता है। गहलोत की शख़्सियत की बात करें, तो वह अपने राजनीतिक कौशल और प्रदेश हित के अहसास के साथ प्रतिकूल परिस्थितियों में भी जगह बना लेते हैं। गहलोत ने यह कहते हुए हर दरवाज़ा खुला रखा है कि यदि मुझसे शिकायत है, तो आप आलाकमान को बता सकते हैं। मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। राजनीतिज्ञ कहते हैं कि गहलोत सियासत का अपरिवर्तनीय नियम जानते हैं कि जो दरवाज़ा खुला रह सकता है, उसे कभी बन्द मत करो। दिलचस्प बात है कि ढेर सारे पराजित लोगों ने चीख़-पुकार मचायी। दीया ने भी जमकर द्वि-अर्थी शब्दों का इस्तेमाल किया। लेकिन गहलोत ने इस स्थिति में चातुर्य का परिचय दिया। उनकी हँसी बहुत कम थी। लेकिन जो थी, वो भी ख़ामोश और सधी हुई थी। क़ुदरती नेमत की बात करें, तो यह कोई सामान्य बात नहीं है कि जहाँ कभी सूखा / अकाल पड़ता था और मवेशियों का पलायन होता था; वहाँ आज न कोई मर रहा है, न ही कोई पलायन कर रहा है। राजस्थान में विकास और निर्माण से जुड़ी योजनाओं का गाँवों में प्रचार करना सामाजिक स्तर पर सार्थक परिवर्तन का संकेत है। आम आदमी को भरोसा हो रहा है कि विकास में देर है; लेकिन अंधेर नहीं। जिस तरह राजधर्म जनहित में ढल रहा है, उसी तरह प्रकृति का स्वभाव भी अनुकूल हो रहा है।

तीसरी बार सत्ता में लोटे गहलोत प्रतीकात्मकता की अपेक्षा वास्तविकता को अधिक तरजीह दे रहे हैं। बतौर एक राजनीतिक जनता की मर्ज़ी के मुताबिक, काम करना बन्द नहीं कर सकते। राजस्थान में शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में बड़ा बदलाव देखने को मिल रहा है। लेकिन गहलोत इतनी जल्दी सन्तुष्ट होने वाले नहीं। मतदाता भी इस उतार-चढ़ाव भरे नाटक के हर दृश्य को अपने अवचेतन में बसा रहा है और यही मिलीजुली छवियाँ अगले चुनाव के नतीजे तय करेंगी। राजनीति का शाश्वत् सत्य है कि कोई राजनीतिक मुखिया जनता का ग़ुस्सा झेल सकता है। लेकिन सत्ता में बैठकर अपनी जग-हँसाई नहीं देख सकता। गहलोत इस बात को भली-भाँति जानते हैं कि वक़्त और सत्ता की अहमियत से चुनौतियों की घटाओं को छिताराया जा सकता है। गहलोत की शासन पर पकड़ और विरोधियों के प्रति भृकुटि तनी रहती है, तो निश्चित रूप से राजनीति में यह उनका आनंददायी अध्याय हो सकता है। तहलका

tehelkaletters@gmail.com

एयरपोर्ट पर प्रोटोकॉल का अड़ंगा

युवा शूटर के गम्भीर आरोपों से बवाल

शबाना

यूँ तो देश में बेटी बचाओ और बेटी पढ़ाओ का नारा बड़े ज़ोर-शोर से दिया जाता है। महिला सशक्तिकरण पर भी ज़ोर देने की बात कही जाती है। पर जब बात चीज़ों के अमल पर आती है, तो वही ढाक के तीन पात ही नज़र आते हैं। 19 फरवरी को भारत की स्टार और देश की शान 19 वर्षीय अंतर्राष्ट्रीय निशानेबाज़ (शूटर) ने सोशल मीडिया साइट पर एयर एंडिया स्टाफ की बदसुलूकी की शिकायत ने कई सवाल खड़े कर दिये। मनु भाकर ने ट्वीट किया- 'दिल्ली एयरपोर्ट पर अपमान का सामना करना पड़ा। इतना ही नहीं, उनको एयर इंडिया के फ्लाइट में चढ़ने से रोका गया और उनसे 10,200 रुपये की एक तरह से घूस माँगी गयी।'

भाकर ने आरोप लगाया कि जब उन्होंने एयर इंडिया एयरपोर्ट के अधिकारी की तस्वीर लेने की कोशिश की तो उनका फोन छीन लिया गया साथ ही उनके साथ अपराधी जैसा बर्ताव किया। इतना ही नहीं, भाकर ने कहा कि जब उसने अधिकारियों को बताया कि वह मैं ओलंपिक में खेलती हूँ और नियमित तौर पर हवाई सफ़र करती हूँ। तो एक अधिकारी ने कहा कि हमें कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता... पैसे देने में इतनी दिक़्क़त नहीं होनी चाहिए। भाकर को हथियारों के लिए 10 हज़ार रुपये जमा कराने के बाद ही भोपाल जाने दिया गया। हालाँकि एयर इंडिया ने बाद में सफ़ाई दी कि शूटर से सिर्फ़ वैध दस्तावेज़ की माँग की गयी थी। बताया गया कि पेश किये गये दस्तावेज़ हथियारों की देखभाल के लिए तय हैंडलिंग चार्ज से छूट पाने के लिए पर्याप्त नहीं थे, लिहाज़ा उन्हें तय शुल्क अदा करना पड़ा। मनु ने बताया कि उनके पास एक एयर पिस्टल और 0.22 बोर गन थी। सोशल मीडिया पर ट्वीट के वायरल होने के बाद खेल मंत्री किरेन रिजिजू ने मामले पर संज्ञान लिया और उनकी मदद की। लेकिन इस वाक़ये ने कई सवाल उठाये।

हरियाणा के झज्जर ज़िले के गोरिया गाँव में जन्मी मनु भाकर पहली बार सुर्ख़ियों में तब आयी थीं, जब सन् 2018 के आईएसएसएफ वर्ल्ड कप में एक साथ दो स्वर्ण पदक जीते थे। इसके बाद उन्होंने यूथ ओलंपिक गेम्स और कॉमनवैल्थ गेम्स में भी स्वर्ण पदक जीतकर भारत को टोक्यो ओलंपिक में पदक की उम्मीद जगा दी। दरअसल, मनु भाकर का परिवार सेना से जुड़ा रहा है। उनके दादा राजकरन साहेब ने सन् 1962 और सन् 1971 के बीच एक सैनिक के रूप में तीन युद्ध लड़े। मनु भाकर के पिता मर्चेंट नेवी में चीफ इंजीनियर हैं और उन्होंने ही बेटी की प्रतिभा को पहचाना और उसको शूटिंग के लिए डेढ़ लाख रुपये देने का फ़ैसला किया। तब क़रीब 16 साल की मनु भाकर ने महिलाओं के 10 मीटर एयर पिस्टल में बेहतरीन प्रदर्शन कर अपने आपको साबित कर दिखाया। मनु अपनी प्रतिभा को और निखारकर बुलंदियों को छू सकती हैं। महज़ 19 साल में इतने पदकों की झड़ी लगा सकती हैं, तो वह निश्चित रूप से अपने देश को टोक्यो ओलंपिक में गौरवान्वित भी कर सकती हैं। तहलका

tehelkaletters@gmail.com

हरियाणवी छोरी मंत्री से ले चुकी है पंगा

देश की नंबर एक और दुनिया में दूसरी रैंकिंग वाली निशानेबाज़ ने इससे पहले भी कई बार अधिकारियों के अलावा अलग-अलग जगहों पर अपना विरोध जता चुकी हैं। एक बार तो उन्होंने अपनी इनामी राशि को लेकर हरियाणा सरकार के ख़िलाफ़ मोर्चा खोल दिया था। दरअसल, यूथ ओलंपिक गेम्स में गोल्ड मेडल जीतने पर हरियाणा सरकार ने उन्हें दो करोड़ रुपये के इनाम देने का ऐलान कर दिया था। जनवरी, 2019 में मनु ने हरियाणा सरकार के ख़िलाफ़ ट्वीट कर आरोप लगाया कि सरकार उन्हें इनाम देने का वादा भूल चुकी है। इसके बाद इस मुद्दे पर शूटर और हरियाणा के खेल मंत्री अनिल विज के बीच लम्बा ट्वीट वॉर चला था। मंत्री ने कहा था कि इस विषय पर विभाग से बात करनी चाहिए थी। मामले को सार्वजनिक तौर पर नहीं लाना चाहिए था, उन्हें इसके लिए माफ़ी माँगनी चाहिए।

"मैं दिल्ली हवाई अड्डे से शूटिंग अकादमी भोपाल के लिए निकली थी। मैं अनुरोध करती हूँ कि वे (अधिकारी) कम से कम खिलाड़ियों का तो सम्मान करें। और कृपया पैसों की माँग न करें। मेरे पास ज़रूरी दस्तावेज़ हैं। एक एथलीट के तौर पर मैं ख़ास छूट नहीं चाहती; लेकिन ज़रूरी सम्मान तो किया जाना चाहिए!

मनु भाकर, अंतर्राष्ट्रीय निशानेबाज़

"एयर इंडिया कभी खिलाड़ियों के साथ बदसुलूकी नहीं करेगा और न ही की है। मनु भाकर के साथ भी उस दिन कहीं कोई बदसुलूकी नहीं हुई। 19 फरवरी को दिल्ली हवाई अड्डे पर मनु और उनकी माँ सुमेधा भाकर को भोपाल के लिए रवाना होना था। सुरक्षा अधिकारियों ने उनसे आर्म्स-एम्युनेशन ले जाने के लिए ज़रूरी दस्तावेज़ माँगे, जो वह नहीं दिखा पायीं। प्रोटोकॉल के तहत उनसे दस्तावेज़ सत्यापित कराने के लिए कहा गया था।

प्रवक्ता, एयर इंडिया

समाधान नहीं है बैंकों का निजीकरण

सतीश सिंह

भारत के बैंकिंग इतिहास में यह पहली बार होगा, जब सरकार 4 सरकारी बैंकों को बेचेगी या उनका निजीकरण करेगी। मार्च 2017 में देश में 27 सरकारी बैंक थे, जिनकी संख्या अप्रैल 2020 में घटकर 12 रह गयी। अब चार सरकारी बैंकों यथा- बैंक ऑफ इंडिया, बैंक ऑफ महाराष्ट्र, सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया और इंडियन ओवरसीज बैंक में सरकार अपनी हिस्सेदारी बेचना चाहती है। इनमें से बैंक ऑफ इंडिया बड़ा बैंक है, जबकि अन्य तीन छोटे। बैंक ऑफ इंडिया में 50 हज़ार, सेंट्रल बैंक में 33 हज़ार, इंडियन ओवरसीज बैंक में 26 हज़ार और बैंक ऑफ महाराष्ट्र में 13 हज़ार कर्मचारी कार्यरत हैं। इस तरह देश भर में इन बैंकों की की कुल 15,732 शाखाओं में कुल एक लाख 22 हज़ार कर्मचारी कार्यरत हैं।

सरकारी बैंकों के निजीकरण के मूल में कोरोना-काल में सरकारी राजस्व में भारी-भरकम कमी आना है। कोरोना-काल में राजस्व के स्रोत सूख जाने की वजह से सरकार विनिवेश के ज़रिये इस कमी को पूरा करना चाहती है। हालाँकि वित्त वर्ष 2021 में सरकार के लिए विनिवेश के लक्ष्य को हासिल करना लगभग नामुमकिन है। इसलिए वित्त वर्ष 2021 में विनिवेश के लक्ष्य को कम करके 32 हज़ार करोड़ रुपये किया गया है। वित्तवर्ष 2021-22 के लिए सरकार ने विनिवेश से राजस्व हासिल करने का लक्ष्य 1.75 लाख करोड़ रुपये रखा है, जिसमें से एक लाख करोड़ रुपये सरकारी बैंकों और वित्तीय संस्थानों में सरकार की हिस्सेदारी बेचकर जुटाये जाने का प्रस्ताव है। विनिवेश की प्रक्रिया सन् 1996 में शुरू की गयी थी, उस साल 31 सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में विनिवेश करके सरकार ने 3,038 करोड़ रुपये ग़ैर-राजस्व कर के रूप में हासिल किये थे। इंडियन ओवरसीज बैंक में सरकार की हिस्सेदारी 95.8 फ़ीसदी, बैंक ऑफ महाराष्ट्र में 92.5 फ़ीसदी, सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया में 92.4 फ़ीसदी और बैंक ऑफ इंडिया में 89.1 फ़ीसदी है। बैंक ऑफ महाराष्ट्र और सेंट्रल बैंक में अगर सरकार अपनी हिस्सेदारी को घटाकर 51 फ़ीसदी करती है, तो उसे 6,400 करोड़ रुपये मिलेंगे। इसी तरह यदि सरकार बैंक ऑफ इंडिया और इंडियन ओवरसीज बैंक में अपनी पूरी हिस्सेदारी बेच देती है, तो उसे लगभग 28,600 करोड़ रुपये मिलेंगे। इंडियन ओवरसीज बैंक के पास सबसे ज़्यादा इक्विटी कैपिटल है; जबकि बैंक ऑफ इंडिया के शेयरों का बाज़ार मूल्य दूसरे सरकारी बैंकों के शेयरों से ज़्यादा है। अगर सरकार दोनों बैंकों के प्रबन्धन को अपने हाथों में रखते हुए अपनी हिस्सेदारी को मौजूदा क़ीमत पर बेचकर 51 फ़ीसदी पर ले आती है, तो उसे लगभग 12,800 करोड़ रुपये मिलेंगे। माना जा रहा है कि सरकार, सरकारी बैंकों में अपनी हिस्सेदारी को 51 फ़ीसदी तक लाएगी और उसके बाद उसे 50 फ़ीसदी से नीचे लाएगी। ऐसा इसलिए किया जाएगा, ताकि कॉर्पोरेट्स इन 4 बैंकों के निजीकरण योजना का हिस्सा बन सकें।

बैंकों को बेचने से सरकार को उसकी पूँजी वापस मिल जाएगी। वैसे इस पूँजी का मौजूदा मूल्य बाज़ार की स्थिति और बैंक की अंतर्निहित ताक़त पर निर्भर करेगा; जैसे शाखाओं व ग्राहकों की संख्या एवं कारोबार व एनपीए आदि का स्तर। बैंकों को बेचने के बाद सरकार को इन बैंकों में और अधिक पूँजी डालने की ज़रूरत नहीं होगी, जिससे सरकार को अपनी वित्तीय स्थिति को मज़बूत करने में मदद मिलेगी। इसके अलावा, वित्त मंत्रालय, केंद्रीय सतर्कता आयोग आदि जैसे सरकारी विभागों को इन संस्थानों की निगरानी और पर्यवेक्षण की आवश्यकता नहीं होगी, जिससे मानव संसाधन और धन दोनों की बचत होगी।

कुछ लोग कयास लगा रहे हैं कि नये अधिग्रहणकर्ता बैंक को अधिक पूँजी वृद्धि के साथ कुशलता से चला पाएँगे। बैंकों का बेहतर मूल्य सरकार को मिलेगा। निजी शेयर धारकों को लाभ होगा। हालाँकि शेयरों का मूल्य बैंक के प्रदर्शन पर आधारित होगा। बाज़ार में कुछ लोगों की यह भी राय है कि भले ही सरकार सरकारी बैंकों को बेचना चाहती है, लेकिन इन्हें बेचना उनके लिए आसान नहीं होगा। उदाहरण के तौर पर सरकार एयर इंडिया में विनिवेश करने की कोशिश एक लम्बे समय से कर रही है, लेकिन अभी तक उसे सफलता नहीं मिली है। क्योंकि उसकी समुचित क़ीमत सरकार को नहीं मिल पा रही है।

बैंक ऑफ महाराष्ट्र का सकल ग़ैर-निष्पादित परिसम्पत्तियाँ (एनपीए) 31 दिसंबर 2020 को 8,072.43 करोड़ रुपये रहा, जो 30 सितंबर 2020 को 9,105.44 करोड़ रुपये था। वहीं 31 दिसंबर, 2019 को यह 15,745.54 करोड़ रुपये था। बैंक ऑफ इंडिया का दिसंबर 2020 में सकल एनपीए 5499.70 करोड़ रुपये रहा, जो सितंबर 2020 में

5623.17 करोड़ रुपये था। इंडियन ओवरसीज बैंक का दिसंबर, 2020 में सकल एनपीए घटकर 16,753.48 करोड़ रुपये हो गया; जो सितंबर 2020 में 17,659.63 करोड़ रुपये था। इसी तरह सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया का दिसंबर, 2020 में सकल एनपीए 29,486.07 करोड़ रुपये रहा, जो सितंबर 2020 में 30,785.43 करोड़ रुपये था। इन बैंकों के तिमाही प्रदर्शन से साफ़ हो जाता है कि इन चारों बैंकों का निजीकरण उनके ख़राब प्रदर्शन के कारण नहीं किया जा रहा है। इन बैंकों के प्रदर्शन में पहले की तुलना में बेहतरी आ रही है।

चार सरकारी बैंकों के निजीकरण से वहाँ कार्यरत कर्मचारियों की नौकरी जाने की सम्भावना बढ़ जाएगी। इसलिए, इन बैंकों के निजीकरण का नकारात्मक प्रभाव सरकार की कल्याणकारी छवि पर पड़ सकता है। असुरक्षित भविष्य की वजह से कर्मचारी अपने काम शिद्दत से नहीं कर सकेंगे, जिससे इन बैंकों का प्रदर्शन प्रभावित होगा। इन बैंकों का सेवा शुल्क भी बढ़ जाएगा। ग्रामीण इलाक़ों में सेवा देने से भी ये बैंक परहेज़ करेंगे। सरकारी योजनाओं को लागू करने से भी इन्हें गुरेज़ होगा। विभिन्न ग़ैर-पारिश्रमिक सेवाओं जैसे पेंशन वितरण, अटल पेंशन योजना, सुकन्या समृद्धि आदि से जुड़े कार्य भी ये बैंक नहीं करेंगे। राजस्व बढ़ाने के लिए बैंक म्यूचुअल फंड, बीमा आदि जैसी अधिक ग़ैर-बैंकिंग सेवाएँ प्रदान कर सकते हैं। निजीकरण के बाद इन बैंकों के प्रति ग्राहकों के मन-मस्तिष्क में विश्वसनीयता का स्तर अनुपस्थित रह सकता है, क्योंकि हाल ही में यस बैंक और पंजाब एवं महाराष्ट्र को-ऑपरेटिव बैंक (पीएमसी) डूब चुके हैं। चूँकि मौजूदा समय में सरकारी योजनाओं को मूर्त रूप देने में सरकारी बैंकों का अहम योगदान है। इसलिए चार बैंकों के निजीकरण से अन्य बचे हुए सरकारी बैंकों पर सरकारी योजनाओं को लागू करने का दबाव बढ़ जाएगा। साथ ही बचे हुए सरकारी बैंक के कर्मचारी भी नौकरी जाने के डर से दबाव में काम करेंगे, जिससे उनका प्रदर्शन भी प्रभावित होगा।

अभी भी देश का एक तबक़ा निजीकरण को हर मर्ज की दवा समझता है, लेकिन ऐसा नहीं है। कई निजी बैंक डूब चुके हैं। ताज़ा मामला पीएमसी और यस बैंक का है। कोरोना-काल में निजी और सरकारी बैंकों ने कैसा प्रदर्शन किया है? यह किसी से छुपा नहीं है। सरकारी बैंकों के विनिवेश से कुछ हज़ार करोड़ ज़रूर मिल सकते हैं, लेकिन उससे सरकार को कितना फ़ायदा होगा? इसका आकलन करने की ज़रूरत है। फ़ायदा नक़दी में हो, यह ज़रूरी नहीं है। सवाल रोज़गार जाने का और बचे हुए सरकारी बैंकों पर काम का दबाव बढ़ने का भी है।

tehelkaletters@gmail.com

संघर्ष

कंटीली पगडंडियों पर जनतंत्र की तलाश में आंग सान सू की

राजेंद्र रवि

आंग सान सू की एक बार फिर सेना के शिकंजे में हैं। उनके लिए यह कोई नयी परिघटना नहीं है; क्योंकि उनकी जीवन यात्रा ही संघर्षों और यातनाओं भरा रहा है। वैसे तो दुनिया की हर सदी उतार-चढ़ाव की गवाह रही है, परन्तु गत वर्ष की छवियाँ इतिहास के आईने से शायद ही ओझल हों। लेकिन उसके जाते-जाते यह उम्मीद भी बँधने लगी थी कि यह दर्द और दमन के मंज़र के बादल को चीरकर हम रौशनी भरे रास्ते पर बढ़ेंगे। परन्तु 21वीं सदी का तीसरा दशक भी जिस तरह आगाज़ किया, वह मौजूदा वक़्त का ही नहीं, बल्कि भविष्य के बड़े और निर्णायक संकेत की ओर इशारा कर रहा है।

म्यांमार का तख़्ता पलट और भारत में किसान आन्दोलन को सरकार की ओर से घेराबन्दी दुनिया में लोकतंत्र के लिए होने वाले संघर्षों और दमन की ओर इशारा कर रही है। म्यांमार और भारत की सिर्फ़ सीमाएँ ही नहीं मिलती हैं, बल्कि एक बड़े कालखण्ड में दोनों साथ-साथ ही थे और म्यांमी जनता की ओर से लड़े जा रहे जनतांत्रिक आन्दोलनों में लोकतंत्र का चहेता भारत हरदम कन्धे-से-कन्धा मिलाकर साथ देता रहा है। यही

वजह है कि म्यांमार के छात्र संगठनों को समय-समय पर यहाँ राजनीतिक शरण मिलती रही है। जिस तरह म्यांमार के आज़ादी के आन्दोलन और आंग सान सू की के परिवार का सफ़र आधुनिक म्यांमार के साथ गहरे तौर पर जुड़ा है, उसी तरह भारतीय समाज के साथ भी इनका घनिष्ठ लगाव रहा है। आंग सान सू की के पिता म्यांमार की आज़ादी के नायक थे और सन् 1948 में ब्रिटिश हुकूमत से आज़ादी मिलने के पूर्व ही उनकी हत्या कर दी गयी थी। उस वक़्त आंग सान सू की महज़ दो वर्ष की थी। इनका लालन-पालन माँ की देखरेख में हुआ। उनकी माँ 'खिन की' ने तत्कालीन बर्मा में एक राजनीतिक हस्ती के रूप में स्थान बनाया और सन् 1960 के दौरान बर्मा (अब म्यांमार) की सरकार की ओर से भारत और नेपाल की राजदूत बनकर आयीं।

आंग सान सू की ने जीसस एंड मैरी स्कूल में पढ़ाई की है और लेडी श्रीराम कॉलेज से राजनीति विज्ञान से सन् 1964 में स्नातक की डिग्री हासिल की है। बाद में वह भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान शिमला में फेलो भी रही है। उस दौरान उन्होंने अपनी चर्चित पुस्तक 'बर्मा एंड इंडिया : सम आस्पेक्ट्स ऑफ इंटेलेक्चुअल लाइफ अंडर कोलोनियललिज्म' लिखी जो आगे चलकर काफ़ी चर्चित हुई। वह बर्मीज़, फ्रेंच, इंग्लिश भाषा की जानकर हैं। सन् 1967 के दौरान इन्होंने सन्त हुग्हस कॉलेज ऑक्सफोर्ड से फिलोसोफी, पोलिटिस और एकोनोमिस से डिग्री प्राप्त की और सन् 1968 में पॉलिटिकल साइंस से मास्टर किया। इन्होंने एलेक्जेंडर अरिस से शादी की, जो तिब्बती साहित्य और संस्कृति के विद्वान थे।

सन् 1988 में आंग सान सू की बर्मा वापस आयीं और वहाँ चल रहे लोकतंत्र बहाली आन्दोलन का नेतृत्व करने लगीं। सन् 1989 में उनके नेतृत्व में एक जन-सैलाब उभरा और रंगून की सड़कें उनसे पट गयीं। लेकिन सैन्य ताक़त के सामने आन्दोलन कमतर रही और उन्हें नज़रबन्द कर दिया गया। इस दौरान 22 वर्षों तक सेना देश का कमान सँभाले रखा और सू 21 वर्षों तक नज़रबन्द रहीं। उनकी नज़रबन्दी दक्षिण अफ़्रीका के महान् नेता नेल्सन मंडेला की याद तरोताज़ा कर देती थी। सन् 2011 में वह वक़्त आया, जब वहाँ हुए चुनाव में उनकी पार्टी को अपार बहुमत मिला, परन्तु उस समय के सैनिक संविधान के अनुसार वह चुनाव नहीं लड़ पायीं और उन्हें राष्ट्रपति के पद से वंचित रखा गया तथा उनको स्टेट काउंसलर बनाया गया।

पिछले वर्ष हुए आम चुनाव में उनकी पार्टी को फिर से जन समर्थन मिला, परन्तु नतीजे आने के बाद सेना ने सू पर चुनाव में धाँधली का आरोप लगाया। म्यांमार के संविधान में अभी भी सैनिक शासन के पास बड़ा अधिकार प्राप्त है और दोनों सदनों में 25 फ़ीसदी सीटें और महत्त्वपूर्ण मंत्री पद सैनिकों के हिस्से में हैं, जिससे उनका दख़ल बना रहता है। यही वजह है कि इस बार फिर सैनिक शासन ने चुनी हुई सरकार को न सिर्फ़ सत्ता से बाहर रखा, बल्कि सू और उनके पार्टी तथा सरकार मंत्रियों को नज़रबन्द कर तख़्तापलट कर दिया। पिछले कुछ दिनों से वहाँ की अवाम में संदेह के बादल घूम रहे थे, जो सच साबित हुआ। अब म्यांमार की सड़कों पर बख़्तरबन्द गाड़ियाँ गश्त कर रही हैं और महत्त्वपूर्ण इमारतों पर सैनिक तैनात हैं। समाचार के सभी माध्यम और इंटरनेट बन्द है। म्यांमार की जनता को वहाँ के सैनिकों ने एक बार फिर बूटों से रौंदना शुरू कर दिया है। यह मंज़र कब तक चलेगा? यह भविष्य बताएगा।

आंग सान सू की जब आज़ाद मुल्क के सपनों के लिए लड़ रही थीं और जेल के अन्दर और नज़रबन्दी के वावजूद दुनिया से समर्थन और सम्मान हासिल किया था, यही वजह है कि नज़रबंदी के दौरान ही उन्हें कई अंतर्राष्ट्रीय सम्मानों से नवाज़ा गया, जिसमें नोबेल पुरस्कार भी था। नोबेल पुरस्कार उन्हें सन् 1991 में मिला। परन्तु नज़रबन्दी के कारण उन्होंने 20 वर्षों के बाद सन् 2012 में उन्हें प्राप्त किया। आंग जब 20 वर्षों बाद नोबेल पुरस्कार लेने पहुचीं, तो दुनिया की निगाहें उन पर टिकी थीं। क्योंकि गाँधी और मंडेला के बाद वह शान्तिपूर्ण संघर्ष की नायिका थीं और दुनिया हसरतों से उन्हें निहार रही थीं। उस वक़्त उन्होंने दुनिया के सामने कहा कि पहले विश्व युद्ध की एक सदी बीत चुकी है। वह क्यों हुआ? आज तक इसका कोई सही-सही जवाब नहीं दे सका है। क्या हम भी क़ुसूरवार नहीं थे? थोड़े कम हिंसक ही सही, लेकिन दोष तो हमारा भी है। हम आने वाले कल और इंसानियत के मुताबिक सही फ़ैसला नहीं कर सके। क़ुसूर तो हमारा भी है। शान्ति और सुकून का क़त्ल सिर्फ़ जंग की जगह नहीं होती है। जब कभी लोगों की तकलीफ़ों को नज़रअंदाज़ किया जाता है, वहाँ संघर्ष की पौध जमने लगती है और तकलीफ़ एवं दर्द और कसीले होते जाते हैं। उन्होंने आगे कहा कि मैंने तकलीफ़ें सही हैं। जिनसे प्यार था, उनसे दूर रहना पड़ा। जिनसे मुहब्बत नहीं थी, उनके साथ जीवन गुज़ारना पड़ा। ऐसे समय में मैं बंदियों और शर्णार्थियों के बारे में सोचती थी। ऐसे लोगों की तकलीफ़ें याद आती थीं, जिन्हें उनकी मिट्टी से उखाड़ दिया गया; जिनकी जड़ें खोद दी गयीं। उन्हें उनके घर, परिवार और दोस्तों से वंचित कर दिया गया। नाउम्मीद के बादलों से पार एक उम्मीद की सपनों से लबालब उन्होंने दुनिया में नयी उमंग का संचार दिया और कहाँ हमारा मक़सद एक ऐसी दुनिया बनाना है, जिसमें कोई विस्थापित न रहे, जहाँ अवाम को शरणार्थी न बनाया जाए, जहाँ कोई बेघर और बेपनाह न हो। एक ऐसी दुनिया की रचना करें जहाँ शान्ति और भाईचारा हो, जहाँ हर इंसान को आज़ादी मयस्सर हो। वक़्त ज़्यादा नहीं गुज़रा है, सिर्फ़ एक दशक पहले की ही बात है और आंग सान सू की फिर से सैन्य शासन के गिरफ़्त में हैं। लेकिन आज की परिस्थियाँ पहले से बदली हुई हैं। इनमें कुछ उनके सत्ता से उपजी हुई इबारतें हैं और कुछ दुनिया के दूसरे मुल्कों के किरदारों ने रची हैं। रोहिंग्या मुसलमानों पर उनके और उनकी सरकार के क़दम से दुनिया की अमन पसन्द बिरादरी को उन्होंने काफ़ी निराश किया; जिसकी वजह से अब ऐसे समूहों का साथ और समर्थन आसान नहीं है। पड़ोसी मुल्कों की आंतरिक हालत भी उनके अनुकूल नहीं है। यही वजह है कि म्यांमार में इतने बड़े तख़्तापलट के वाबजूद उसके ख़िलाफ़ स्वर कमज़ोर दिख रहे हैं। शायद यह तात्कालिक हो और आंग सान सू की फिर से सत्ता में लौटें। पाँच बसंत के बाद दुनिया के सामने एक नयी बहार की इबारत लिखने की दूसरी पारी की नायिका हों। तहलका

(लेखक जन आन्दोलनों के राष्ट्रीय समन्यव, आईडीएस और पीआरसी से जुड़े हैं तथा शहरी योजनाकार हैं।)
tehelkaletters@gmail.com

आपके शहर में...

समस्याएँ पैदा करते लोग !

सड़क पर लगा टैंट (फाइल फोटो)

मंजू मिश्रा

शहरों में हर जगह कई तरह की समस्याएँ अनायास ही देखने को मिल जाती हैं। इन समस्याओं को शहर के ही कुछ लोग पैदा करते हैं और जो लोग इन समस्याओं से हर रोज़ दो-चार होते हैं, वो इन्हें नियति समझकर ख़ामोश रहते हैं। प्रशासनिक अधिकारी व ज़िम्मेदार विभाग के लोग न तो किसी से कुछ कहते हैं और न ही शहरों की दशा बिगाड़ने वाले लोगों के ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई करते हैं। हालत यह है कि जिस गली हो, सड़क हो, बाज़ार हो या फिर मोहल्लों में बने मकान हर जगह कोई-न-कोई समस्या देखने को मिल जाती है। दिल्ली की ऐसी ही समस्याओं को लेकर एक रिपोर्ट :-

इन लोगों का क्या

सड़कों पर अवरोध : छोटे-बड़े शहरों में यह आम बात हो चली है। लोग जब भी कोई छोटा-बड़ा कार्यक्रम करते हैं, सड़कों पर टेंट लगवा देते हैं। इससे न केवल रास्ता बन्द होता है, बल्कि टेंट गाड़ने से सड़कों में गड्ढे हो जाते हैं। इतना ही नहीं कार्यक्रम होने के बाद सड़कों पर गन्दगी अलग हो जाती है। कोई निजी कार्यक्रम के नाम पर सड़कों पर टेंट लगाता है, तो कोई सार्वजनिक कार्यक्रम के नाम पर। वहीं कुछ लोग सड़कों पर दूसरी तरह के अतिक्रमण करते हैं। इन अतिक्रमणकारियों का कोई विरोध कर दे या आपत्ति करे, तो ये लड़ने पर आमादा हो जाते हैं। स्थानीय पुलिस भी इस मामले में कुछ नहीं कहती। वैसे भी अधिकतर स्थानीय लोग इसलिए भी किसी की शिकायत नहीं करते, क्योंकि वो भी अपने कार्यक्रम सड़कों पर ही निपटाते हैं और यह सब वे पैसों की बचत के लिए करते हैं।

सड़क पर पड़ा बिल्डिंग मटेरियल, सीमापुरी, दिल्ली

क्या है क़ानून

सड़कों पर अतिक्रमण करने, मार्ग में अवरोध पैदा करने पर भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा-283 के तहत व्यक्ति पर कार्रवाई हो सकती है। हालाँकि यह अपराध जमानती होता है और मजिस्ट्रेट के यहाँ इसकी सुनवाई हो सकती है। लेकिन जुर्माने का प्रावधान है, चाहे व्यक्ति को सज़ा न हो या जमानत हो जाए।

बनी-बनायी सड़कें तोड़ना : शहरों में कुछ लोग बनी बनायी सड़कों को अपने फ़ायदे या पानी या सीवर की लाइन डालने के लिए तोड़ डालते हैं। इन कामों के लिए वे नगर निगम या सम्बन्धित विभाग की मदद लेना उचित नहीं समझते। ऐसे लोगों की इस हरकत से लाखों की लागत से बनी सड़कें ख़राब हो जाती हैं और वहाँ गड्ढे बन जाते हैं। इन गड्ढों की वजह से राहगीरों को बहुत दिक़्क़त होती है। बहुत-से लोग तो सड़कें खोदकर उन्हें मिट्टी से भर देते हैं, जो कि कुछ ही दिनों में हट जाती है और वहाँ पानी भरने लगता है। जिससे आस-पास की सड़क भी टूट जाती है। अगर सड़क तुड़वाने वालों से सवाल पूछ लो कि उन्होंने सड़क क्यों तोड़ी? तो उनका जवाब इतना ख़राब होता है, मानो उन्हें ग़लत टोक दिया हो।

सड़क तोड़ते लोग, मयूर विहार फेज 3, दिल्ली

टूटने के बाद ख़राब हुई सड़क, मयूर विहार फेज 3, दिल्ली

क्या है क़ानून

वैसे तो सरकारी सम्पत्ति तोड़ने, उसे नुक़सान पहुँचाने पर क़ैद और सज़ा दोनों का प्रावधान है। लेकिन सड़क तोड़ने वाले लोगों के ख़िलाफ़ इसलिए कार्रवाई नहीं होती, क्योंकि न तो नगर निगम इसकी पड़ताल करता है और न ही पीडब्ल्यूडी। अगर लोग इसकी शिकायत करें, तो शायद ऐसे लोगों पर कड़ी कार्रवाई हो सके। एक निगम पार्षद ने नाम न छापने की शर्त पर बताया कि ऐसा नहीं है कि सड़कें तोड़ने वालों के ख़िलाफ़ कार्रवाई का नियम नहीं है; लेकिन कार्रवाई न होने की कई वजहें हैं। कोई रिश्वत दे देता है, तो कोई पहुँच वाला होता है। लेकिन फिर भी अगर ऐसे लोगों की शिकायत मोहल्ले वाले या राहगीर करें, तो उन पर कार्रवाई हो सकती है। मगर राहगीरों को कोई मतलब नहीं होता है और मोहल्ले में अधिकतर लोग ग़ैर-क़ानूनी काम किये हुए होते हैं, जिससे कोई किसी की शिकायत नहीं करता।

tehelkaletters@gmail.com

क्या कठपुतली हैं हम ?

पंडित प्रेम बरेलवी

इन दिनों मज़हबी मतभेद और तकरार होना एक आम चलन की तरह हैं। सियासत इसका बेजा फ़ायदा उठा ले जाती है। कई शहर इसके गवाह हैं, जहाँ मज़हबी मतभेद पहले तनाव में बदला और फिर भयानक हिंसा में। लोग लड़े, कटे-मरे, और फ़ायदा हुआ सियासी लोगों को। इतिहास इस बात का गवाह है कि मज़हबों को लेकर हुए इंसानी झगड़ों ने शहर के शहर, गाँव के गाँव बर्बाद कर दिये हैं।

लेकिन हम इंसानों ने कभी नहीं सोचा कि मतभेदों के चलते हम एक झटके में बर्बाद हो जाने के लिए क्यों उतावले रहते हैं? क्या हम एक होकर नहीं रह सकते? क्या हमारे बाँटने से ईश्वर बँट जाएगा? क्या हम अपने अस्तित्व को मिटाकर कुछ पा सकते हैं? ये मज़हब, ये धरती, ये आकाश, ये उपभोग की वस्तुएँ यहाँ तक कि हमारा शरीर भी यहीं रह जाना है। फिर हम इस चार दिन की ज़िन्दगी को प्यार से मिलजुलकर क्यों नहीं बिता देते? नफ़रत से किसको फ़ायदा हुआ है? हाँ, सियासी लोगों को फ़ायदा ज़रूर होता है। या फिर उन लोगों को जो मज़हबी खोल ओढ़कर हमें भ्रमित करते हैं। अगर हमें आगे अपनी और अपनी आने वाली पीढ़ियों की ज़िन्दगी को सुरक्षित करना है, तो हमें आपस में प्यार और भाईचारे से ही रहना होगा। नफ़रतों से न तो हम बहुत लम्बी ज़िन्दगी जी सकते हैं और न हमारा इतिहास बहुत समय तक रह सकता है। हमने देखा है कि वे लोग आज तक हमारी यादों में ज़िन्दा हैं, जो इंसानियत और प्यार को बचाने के लिए जीए या इसके लिए अपने को न्यौछालर कर गये। वहीं जिन लोगों ने नफ़रत बाँटी, लोगों की जान ली, दुनिया को बर्बाद किया, उन्हें नाम ज़ेहन में आते ही हमारे मन में उनके प्रति एक प्रकार की नफ़रत ही पनपती है। भले ही ऐसे लोग भी इतिहास में दर्ज हैं, लेकिन उनका सम्मान बिल्कुल भी नहीं किया जाता है। एक तरफ़ महापुरुषों की जयंतियाँ त्यौहार की तरह मनायी जाती हैं, तो दूसरी तरफ़ बुरे लोगों के पुतले फूँके जाते हैं; उन पर लानत भेजी जाती है। कह सकते हैं कि मज़हबों (सम्प्रदायों) से कहीं ऊँचा धर्म इंसानियत है। क्योंकि इंसानियत जीओ और जीने दो की राह दिखाती है; जबकि सम्प्रदाय कहीं-न-कहीं तनाव, विवाद, झगड़े और विनाश का कारण बनते हैं।

हमारे बरेली में ऐसे कई सन्त और इंसानियत के पुजारी हुए हैं, जिन्होंने एक मिसाल क़ायम की। हम आज भी ऐसे लोगों को एक पीर की तरह बड़े ही आदर के साथ याद करते हैं। चुन्ना मियाँ एक ऐसे ही पीर-फ़कीर थे, जिन्होंने इंसानियत ही नहीं, एकता और भाईचारे की वह मिसाल खड़ी की, कि उन्हें जब तक यह दुनिया रहेगी, तब तक प्यार के पैग़ाम के रूप में उन्हें याद किया जाएगा। चुन्ना मियाँ एक ऐसी शख़्सियत थे, जो उस ज़माने में करोड़पति होते हुए भी नंगे पैर और पैदल चलने में भी शर्म नहीं करते थे। ग़रीबों को दान करना तो उनकी एक आदत-सी थी, उन्होंने कभी भी मज़हबों को इंसानियत के बीच दीवार नहीं बनने दिया। वह नमाज़ भी पढ़ते थे और पूजा भी करते थे। क़ुर्आन भी पढ़ते थे और रामायण तथा गीता भी। ईद भी मनाते थे और होली तथा दीपावली भी। हर साल घर में रामायण का पाठ कराते थे, गीता का पाठ कराते थे। उनके यहाँ दोनों ही धर्मों के लोग आया-जाया करते थे। उन्हें हर कोई अपने घरेलू कार्यक्रमों में आमंत्रित करता था और वह सभी के लिए वक़्त निकालने की कोशिश करते थे।

आज भी बरेली में लक्ष्मी नारायण का मन्दिर, जो कि चुन्ना मियाँ का मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है; इस बात की गवाही है कि चुन्ना मियाँ ईश्वर और अल्लाह में भेद करने वालों के लिए एक ऐसा जवाब थे, जिसके आगे मज़हबी दीवारें उठाने वालों के मुँह बन्द हो जाते हैं। चुन्ना मियाँ ने मज़हबों को नकारा नहीं और न ही उनके मानने वालों से यह कहा कि वे कहीं भी ग़लत हैं। उन्होंने केवल लोगों को यह समझाने का प्रयास किया कि सभी मज़हबों का सम्मान करो, सभी से प्यार करो। और यह सन्देश भी उन्होंने ढोल पीटकर या प्रवचन करके नहीं दिया, बल्कि बड़ी ख़ामोशी से इंसानियत, प्यार और भाईचारे के रास्ते पर ख़ुद चलकर दिया। बरेली में आज भी जब कभी सनातन और इस्लाम धर्म को मानने वालों की एकता और भाईचारे की बात आती है, तो चुन्ना मियाँ का नाम ज़रूर लिया जाता है। आज भी इस शहर को बरेली शरीफ़ कहा जाता है और इस प्यार को ज़िन्दा रखने की क़समें खाने वाले आज भी चुन्ना मियाँ की मिसालें दिया करते हैं, उनकी क़समें खाते हैं।

क्या ऐसा इस महान् और पवित्र भारत भूमि के हर गाँव, हर क़स्बे और हर शहर में नहीं हो सकता? क्या हम अपने भारत को प्यार, भाईचारे और एकता से अखण्ड नहीं रख सकते? इसे और मज़बूत नहीं बना सकते? बना सकते हैं। लेकिन कहीं हमें अपने-अपने स्वार्थ की बेड़ियों ने जकड़ा हुआ है, तो कहीं मज़हबी दीवारों ने अपने दायरों में क़ैद कर रखा है। हम एक इंसान बनने की बजाय हैवान बनने की राह पर चल पड़े हैं और अन्धानुकरण कर रहे हैं। सम्प्रदायों का अन्धानुरण, चन्द किताबों का अन्धानुकरण और कुछ ऐसे लोगों को अन्धानुकरण, जो हमें एक बैल, बल्कि यों कहें कि एक गधे की तरह हाँक रहे हैं। क्या हम अपना विवेक खो चुके हैं? क्या हमने अपने अस्तित्व को कुछ ऐसे लोगों के हाथों में सौंप दिया है, जो केवल और केवल हमारा ग़लत तरीक़े से अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं। क्या हो गया है हमारे ज्ञान को? क्या हम कठपुतली हैं? क्या हम अपने मन की आँखों से नहीं देख सकते? इन सवालों पर हमें विचार करना होगा और पहचानना होगा ख़ुद को; ताकि हम मज़हबों की दीवारें गिराकर इन दायरों से बाहर निकलकर सबसे पहले एक इंसान बन सकें और ईश्वर के सही रूप को पहचान सकें। तहलका

tehelkaletters@gmail.com

TEHELKA FOUNDERS
Aamir Husain Khan
Abbas Ali Baig & Vinu
Abhay Yograj
Action Aid India Society
Adittya Oomman
Aditya Vinayak Patwardhan
Aga Publications Ltd
Alefiya Shabbir Khorakiwala
Alyque Padamsee
Amal Ganguli
Anil Agarwal
Anil Nayar
Anil Wanvari
Anirudh Gupta
Anju And Abhijit
Anuroop Singh
Arif Mohd Khan
Arindam Chaudhuri
Arnab Basu
Arvind K. Singhania
Asha Sarabhai
Ashish Goel
Ashok Jaipuria
Ashok Sachdev
Ashok Sharma
Ashwani Khurana
Aslam Qader Khan
Av Anoop
Beena And Kishu
Benny Thomas
Bill Emmott
Bindiya Jain
Bunty Pasricha
C Anand David (Man Ford Allianz Pvt. Ltd.)
Ccl Productsindia
Chandni Parekh
Chinmay S Patel
Ck Ranganathan
Collin Benjamin
Color Chips India Ltd
Consumer Guidance Center
Crishna Smita Godrej
Cyrus Guzder
D Surendra Babu
D.Baskar & D.Nirmal
Daniel Lak
Deepak Kapur
Dilip D'souza
Dr K Shashidhar
Dr. Kt Lalwani
Dr. Pradhap C Reddy
Dr. Ravi
Dr.C.P Sreekumar
Dr.S.P. Vasi Reddi
Eric Johnson
Foundation For Demorcratic Reforms
Gaurav Dalmia
Gaurav Singh
Gautam Berry
Gautam Banerjee
Gl Sultania
H K Chaudhary
H P Barooah (Chairman)
Harsh C Mariwala
Hemant D Naiknavare
Hindal Haidar Tyabji
Indian Tv Dot Com
Indrajeet Singh
Ishaat Hussain
J Mehra
J P Singh
Jaaved Ahmed Jaaferi
Jagdip Singh
Jagdish Chokar
Javed Akhtar
Jay Galla
Jayan Pillai
Jb & Neela D'souza
Jeanne-Marie Verghese
Jerry Pinto
Jit Paul
John Fernandes
John Singh
John Thomas Vechurath
K.N.Memani
K.T.S Tulsi
Kabir Vedi
Karan Paul
Karun Krishna Sanghi
Kiran Beeravelli
Kiran Mazumdar Shaw
Aamir Husain Khan
Abbas Ali Baig & Vinu
Abhay Yograj
Action Aid India Society
Adittya Oomman
Aditya Vinayak Patwardhan
Aga Publications Ltd
Alefiya Shabbir Khorakiwala
Alyque Padamsee
Amal Ganguli
Anil Agarwal
Anil Nayar
Anil Wanvari
Anirudh Gupta
Anju And Abhijit
Anuroop Singh
Arif Mohd Khan
Arindam Chaudhuri
Arnab Basu
Arvind K. Singhania
Asha Sarabhai
Ashish Goel
Ashok Jaipuria
Jeanne-Marie Verghese
Jerry Pinto
Jit Paul
Jo
Daniel Lak
Dilip D'souza
Dr K Shashidhar
Dr. Kt Lalwani
Dr. Pradhap C Reddy
Dr. Ravi
Dr. Surinder Kapur
Dr.C.P Sreekumar
Dr.S.P. Vasi Reddi
Eric Johnson
Foundation For Demorcratic Reforms
Gaurav Dalmia
Gaurav Singh
Gautam Berry
Gautam Banerjee
Gl Sultania
H K Chaudhary
H P Barooah (Chairman)
Harsh C Mariwala
Hemant D Naiknavare
Hindal Haidar Tyabji
Indian Tv Dot Com
Indrajeet Singh
Ishaat Hussain
J Mehra
J P Singh
Jaaved Ahmed Jaaferi
Jagdip Singh
Jagdish Chokar
Javed Akhtar
Jay Galla
Jayan Pillai
Jb & Neela D'souza
Jeanne-Marie Verghese
Jerry Pinto
Jit Paul
Jo
Aamir Husain Khan
Abbas Ali Baig & Vinu
Abhay Yograj
Action Aid India Society
Adittya Oomman
Aditya Vinayak Patwardhan
Aga Publications Ltd
Alefiya Shabbir Khorakiwala
Alyque Padamsee
Amal Ganguli
Anil Agarwal
Anil Nayar
Anil Wanvari
Anirudh Gupta
Anju And Abhijit
Anuroop Singh
Arif Mohd Khan
Arindam Chaudhuri
Arnab Basu
Arvind K. Singhania
Asha Sarabhai
Ashish Goel
Ashok Jaipuria
Ashok Sachdev
Ashok Sharma
Ashwani Khurana
Aslam Qader Khan
Av Anoop
Beena And Kishu
Benny Thomas
Bill Emmott
Bindiya Jain
Bunty Pasricha
C Anand David (Man Ford Allianz Pvt. Ltd.)
Ccl Productsindia
Chandni Parekh
Chinmay S Patel
Ck Ranganathan
Collin Benjamin
Color Chips India Ltd
Consumer Guidance Center
Crishna Smita Godrej
Cyrus Guzder
D Surendra Babu
D.Baskar & D.Nirmal
Daniel Lak
Deepak Kapur
Dilip D'souza
Dr K Shashidhar
Dr. Kt Lalwani
Dr. Pradhap C Reddy
Dr. Ravi
Dr. Surinder Kapur
Dr.C.P Sreekumar
Dr.S.P. Vasi Reddi
Eric Johnson
Foundation For Demorcratic Reforms
Gaurav Dalmia
Gaurav Singh
Gautam Berry
Gautam Banerjee
Gl Sultania
H K Chaudhary
H P Barooah (Chairman)
Harsh C Mariwala
Hemant D Naiknavare
Hindal Haidar Tyabji
Indian Tv Dot Com
Indrajeet Singh
Ishaat Hussain
J Mehra
J P Singh
Jaaved Ahmed Jaaferi
Jagdip Singh
Jagdish Chokar
Javed Akhtar
Jay Galla
Jayan Pillai
Jb & Neela D'souza
Jeanne-Marie Verghese
Jerry Pinto
Jit Paul
Jo
Aamir Husain Khan
Abbas Ali Baig & Vinu
Abhay Yograj
Action Aid India Society
Adittya Oomman
Aditya Vinayak Patwardhan
Aga Publications Ltd
Alefiya Shabbir Khorakiwala
Alyque Padamsee
Amal Ganguli
Anil Agarwal
Anil Nayar
Anil Wanvari
Anirudh Gupta
Anju And Abhijit
Anuroop Singh
Arif Mohd Khan
Arindam Chaudhuri
Arnab Basu
Arvind K. Singhania
Asha Sarabhai
Ashish Goel
Ashok Jaipuria
Ashok Sachdev
Ashok Sharma
Ashwani Khurana
Aslam Qader Khan
Av Anoop
Beena And Kishu
Benny Thomas
Bill Emmott
Bindiya Jain
Bunty Pasricha
C Anand David (Man Ford Allianz Pvt. Ltd.)
Ccl Productsindia
Chandni Parekh
Chinmay S Patel
Ck Ranganathan
Collin Benjamin
Color Chips India Ltd
Consumer Guidance Center
Crishna Smita Godrej
Cyrus Guzder
D Surendra Babu
D.Baskar & D.Nirmal
Daniel Lak
Deepak Kapur
Dilip D'souza
Dr K Shashidhar
Dr. Kt Lalwani
Dr. Pradhap C Reddy
Dr. Ravi
Dr. Surinder Kapur
Dr.C.P Sreekumar
Dr.S.P. Vasi Reddi
Eric Johnson
Foundation For Demorcratic Reforms
Gaurav Dalmia
Gaurav Singh
Gautam Berry
Gautam Banerjee
Gl Sultania
H K Chaudhary
H P Barooah (Chairman)
Harsh C Mariwala
Hemant D Naiknavare
Hindal Haidar Tyabji
Indian Tv Dot Com
Indrajeet Singh
Ishaat Hussain
J Mehra
J P Singh
Jaaved Ahmed Jaaferi
Jagdip Singh
Jagdish Chokar
Javed Akhtar
Jay Galla
Jayan Pillai
Jb & Neela D'souza
Jeanne-Marie Verghese
Jerry Pinto
Jit Paul
Jo
Aamir Husain Khan
Abbas Ali Baig & Vinu
Abhay Yograj
Action Aid India Society
Adittya Oomman
Aditya Vinayak Patwardhan
Aga Publications Ltd
Alefiya Shabbir Khorakiwala
Alyque Padamsee
Amal Ganguli
Anil Agarwal
Anil Nayar
Anil Wanvari
Anirudh Gupta
Anju And Abhijit
Anuroop Singh
Arif Mohd Khan
Arindam Chaudhuri
Arnab Basu
Arvind K. Singhania
Asha Sarabhai
Ashish Goel
Ashok Jaipuria
Ashok Sachdev
Ashok Sharma
Ashwani Khurana
Aslam Qader Khan
Av Anoop
Beena And Kishu
Benny Thomas
Bill Emmott
Bindiya Jain
Bunty Pasricha
C Anand David (Man Ford Allianz Pvt. Ltd.)
Ccl Productsindia
Chandni Parekh
Chinmay S Patel
Ck Ranganathan
Collin Benjamin
Color Chips India Ltd
Consumer Guidance Center
Crishna Smita Godrej
Cyrus Guzder
D Surendra Babu
D.Baskar & D.Nirmal
Daniel Lak
Deepak Kapur
Dilip D'souza
Dr K Shashidhar
Dr. Kt Lalwani
Dr. Pradhap C Reddy
Dr. Ravi
Dr. Surinder Kapur
Dr.C.P Sreekumar
Dr.S.P. Vasi Reddi
Eric Johnson
Foundation For Demorcratic Reforms
Gaurav Dalmia
Gaurav Singh
Gautam Berry
Gautam Banerjee
Gl Sultania
H K Chaudhary
H P Barooah (Chairman)
Harsh C Mariwala
Hemant D Naiknavare
Hindal Haidar Tyabji
Indian Tv Dot Com
Indrajeet Singh
Ishaat Hussain
J Mehra
J P Singh
Jaaved Ahmed Jaaferi
Jagdip Singh
Jagdish Chokar
Javed Akhtar
Jay Galla
Jayan Pillai
Jb & Neela D'souza
Jeanne-Marie Verghese
Jerry Pinto
Jit Paul
Jo
Aamir Husain Khan
Abbas Ali Baig & Vinu
Abhay Yograj
Action Aid India Society
Adittya Oomman
Aditya Vinayak Patwardhan
Aga Publications Ltd
Alefiya Shabbir Khorakiwala
Alyque Padamsee
Amal Ganguli
Anil Agarwal
Anil Nayar
Anil Wanvari
Anirudh Gupta
Anju And Abhijit
Anuroop Singh
Arif Mohd Khan
Arindam Chaudhuri
Arnab Basu
Arvind K. Singhania
Asha Sarabhai
Ashish Goel
Ashok Jaipuria
Ashok Sachdev
Ashok Sharma
Ashwani Khurana
Aslam Qader Khan
Av Anoop
Beena And Kishu
Benny Thomas
Bill Emmott
Bindiya Jain
Bunty Pasricha
C Anand David (Man Ford Allianz Pvt. Ltd.)
Ccl Productsindia
Chandni Parekh
Chinmay S Patel
Ck Ranganathan
Collin Benjamin
Color Chips India Ltd
Consumer Guidance Center
Crishna Smita Godrej
Cyrus Guzder
D Surendra Babu
D.Baskar & D.Nirmal
Daniel Lak
Deepak Kapur
Dilip D'souza
Dr K Shashidhar
Dr. Kt Lalwani
Dr. Pradhap C Reddy
Dr. Ravi
Dr. Surinder Kapur
Dr.C.P Sreekumar
Dr.S.P. Vasi Reddi
Eric Johnson
Foundation For Demorcratic Reforms
Gaurav Dalmia
Gaurav Singh
Gautam Berry
Gautam Banerjee
Gl Sultania
H K Chaudhary
H P Barooah (Chairman)
Harsh C Mariwala
Hemant D Naiknavare
Hindal Haidar Tyabji
Indian Tv Dot Com
Indrajeet Singh
Ishaat Hussain
J Mehra
J P Singh
Jaaved Ahmed Jaaferi
Jagdip Singh
Jagdish Chokar
Javed Akhtar
Jay Galla
Jayan Pillai
Jb & Neela D'souza
Jeanne-Marie Verghese
Jerry Pinto
Jit Paul
Jo

PUBLISHED ON 1 MARCH, 2021 RNI NO. DELHIN/2009/28890

FOR THE FORTNIGHT 1-15 MARCH, 2021

INDIA'S MOST ICONIC AND PATH-BREAKING INVESTIGATIVE STORIES

Continue to read

TehelkaHindi.com